१/२२ १-२-७०

१/२२ १-२-७०

लेकिन
क्या मैं आपसे पूछूं
कि जिसे आप खोज रहे हैं
क्या वह आपसे दूर है
जो दूर हो
उसे खोजा जा सकता है
पर जो स्वयं आप हो
उसे
कैसे खोजा जा सकता है

आचार्य श्री के आगामी देश व्यापी कार्यक्रम

दिनांक	स्थान	कार्यक्रम	संयोजक
२, ३, ४ एवं ५ मई ७०	नारगोल	साधना शिविर	श्री ईश्वर बाबू, जीवन जागृति केंद्र, रूम नं. ५३, एम्पायर बिल्डिंग, डा० डी. एन. रोड, बंबई : १ फोन : २६४५३०
१८ एवं १९ मई ७०	नवसारी (सूरत)	सत्संग	श्री कांतिलाल पटेल, भाग्योदय कांसट्रक्शन कं० दूधिया तालाब रोड, नवसारी (सूरत)
२०, २१ एवं २२ मई	सूरत	प्रवचन	श्री नानुभाई नायक, साहित्य संगम, बाबा सीढ़ी, गोपीपुरा, सूरत-२

आचार्य श्री महाराजा भावनगर के आमंत्रण पर भावनगर में

मुख पृष्ठ चित्र : प्रिंस स्टूडियो--भावनगर

(आवरण ले आउट : श्री हरीशचंद्र, देहली)

एक सामायिक चिंतना

टेकनालाजी और भारत

(आचार्य श्री के जीवन दर्शन का व्यवहारिक पक्ष)

● इंडस्ट्रियल डेवलपमेंट हम कैसे कर सकते हैं ? देश के सामने फारेन एक्सचेंज, रा--मैटेरियल आदि की बड़ी--बड़ी समस्यायें हैं ?

मेरे लिये बड़ा सवाल यह नहीं है। बड़ा सवाल तो यह है कि हमारा माइंड कैसे टेक्नालाजी के लिये राजी हो। दिमाग तैयार हो तो रूस ने आखिर किससे फायनेंस किया है पिछने पचास सालों में ? १९१७ के पहले रूस की हालत हमसे बदतर थी, बेहतर नहीं थी। रूस को तो कोई सहायता भी नहीं थी दूसरे मुल्कों से क्योंकि दूसरे देश तो उसे नष्ट करने को तैयार थे। लेकिन पचास सालों से वह टेक्नालाजीकली कई मामलों में अमेरिका से भी आगे हो गया। कैसे ?

असल बात यह है कि जो बातें मैंने कहीं जब तक वह नहीं हो जातीं तब तक आपको फारेन केपिटल भी मिल जाये तो भी आप इंडस्ट्रियालाइज नहीं कर पायेंगे क्योंकि माइंड का मेकअप हमारा इंडस्ट्रियल नहीं है। यहां वह क्रांति नहीं हो सकी जो औद्योगिक क्रांति पश्चिम में हुई। उस क्रांति के पीछे जो पुनर्जागरण का युग बीता उसने सारे माइंड बदल दिये लोगों के। भारत में वैसा कोई काल नहीं बीता।

तो मेरे लिये सारा सवाल माइंड का है, केपिटल का नहीं है। योरोप के जिन मुल्कों में इंडस्ट्री खड़ी हुई वे कहां से फारेन केपिटल लाये ? आज से डेढ़ सौ साल पहले वहां भी कौन सी इंडस्ट्री थीं ? समझ लें हम उसी हालत में हैं। मैं पूछता हूं कि योरोप में डेढ़ सौ साल पहले कहां से कैपिटल आई ? कहां से टेक्नीशियन आये ? कहां से सारी इंडस्ट्रीज आई ?

● हमारी तरह उनके सामने जनसंख्या का सवाल नहीं था।

यह बात नहीं है। यदि पापुलेशन प्राबलम उनके सामने खड़ी होती तो इंडस्ट्री और बड़ी आती। सारा सवाल माइंड का है। आपके सामने जनसंख्या का सवाल तो आज है, पचास साल पहले तो नहीं था, तब आपने इंडस्ट्री पैदा क्यों नहीं कर लीं ?

● तब हम गुलाम थे।

वह गुलाम भी आप क्यों थे ? गुलाम भी आप इसलिये हुए कि टेक्नालाजिकली आप विकसित नहीं हुए और जब भी तकनीकों में ज्यादा विकसित कोई कौम आपके मुकाबले आई आपको हार जाना पड़ा। आप हैरान होंगे पिछले हजार सालों का इतिहास देखकर कि जब भी आप हारे, जिससे भी हारे, वह कौम आपसे ज्यादा ताकतवर नहीं थी, सिर्फ टेकनीकली ज्यादा समझदार और विकसित थी।

पहली दफा मुसलमान हिन्दुस्तान में आये तो हिन्दुस्तान का राजा हाथी पर बैठकर लड़ने गया। वह टेकनीकली गलत था। घोड़े पर बैठ कर लड़ने वाले से हार जाना पड़ा। घोड़े पर लड़ने वाला टेकनीकली ज्यादा होशियार था क्योंकि घोड़ा तेज जानवर है, जल्दी से बचता है, भागता है। हाथी जबकि लड़ने के लिये बिलकुल बेहूदा जानवर है, उस पर आप सवारी निका लिए किसी महाराजा की तो ठीक है लेकिन वह युद्ध के मैदान का जानवर थोड़े ही है। तो हार जाना पड़ा घोड़े पर लड़ने वाले से। इसी तरह और जो कौमें यहां आई वे सब कमजोर कौमें थीं...... न उनकी संख्या ज्यादा थी, न उनके पास रोटी थी खाने को, न कुछ था न कुछ था सिर्फ टेकनीकली वे हमसे ज्यादा विकसित साधन लेकर आई और हमें हार जाना पड़ा। इसके बाद जब आप हारे तो आप बन्दूक लेकर लड़ रहे थे और दूसरे तोप लेकर आ गये थे।

अंग्रेजों की ताकत कितनी थी हिन्दुस्तान में जीत जाने की ? इतने दूर देश से आकर एक कौम खड़ी हो जाये थोड़े से लोगों को लेकर और जीत जाये, क्या कारण हो सकता है ? बस वे टेकनीकली हमसे ज्यादा होशियार थे, और कोई कारण नहीं था। लेकिन हमारे नेता गलत बातें समझाते हैं कि चूंकि हममें भेद-भाव था इसलिये हम हारे। यह सब बिलकुल गलत बातें हैं। असल बात यह थी कि आप हमेशा टेकनीकली पीछे थे। जब भी दुश्मन आया आपके सामने वह टेकनीकली ज्यादा बड़ा साधन लेकर आया और आप ठप्प हो गये।

दूसरे देश तकनीक में रोज हमसे आगे निकलते जा रहे है। वह अणु भट्टियां खड़ी कर रहे हैं और यहां हम यही बेवकूफी का विचार करते रहते हैं कि हमें बनाना है या नहीं। यही बेवकूफी हजार साल तक गुलाम बनाये रखी क्योंकि वह बन्दूकवाला सोचता था कि तोप बनाना या नहीं। हम बना नहीं पाये और दूसरे तोप बना कर आ गये छाती पर। यहां आप सोचते रहिए कि बुद्ध भगवान क्या कहते हैं, महावीर स्वामी क्या कहते हैं, महात्मा गांधी क्या कहते हैं............अणु बनाना कि नहीं ? अहिंसा की फिलासफी क्या कहती है ? और वहां दूसरे देश अणु बम बना लेंगे।

● अब तो भारत में भी अणुबम बनाने की पूरी सम्भावना है।

बिलकुल ही संभावना है। लेकिन सवाल अकेले अणु का थोड़े ही है। हर दिशा में टेक्नालाजिकली हमें श्रेष्ठ होना चाहिए। अणु बम टेक्नालाजी का श्रेष्ठतम हिस्सा है, वह हमें बनाना चाहिए। जरूरी नहीं है कि हम लड़ने जायें लेकिन अणु शक्ति हमें खड़ी कर ही लेना चाहिए। कल बच्चों के लिये वह सवाल खड़ा हो सकता है। मेरी द्रष्टि में केवल अणु बम का सवाल नहीं है। अब जैसे कि पूरी दुनिया में ऐलोपैथी विकसित हो रही है लेकिन यहां के लोग आयुर्वेद की ही बातें करते चले जाते हैं। और न केवल वे बातें करते हैं

बल्कि सरकार भी उनको सहायता दे रही है। टेक्नालाजिकली हर जगह ही गलत बातें हम करते हैं। दो हजार साल में मेडीकल साइंस कहां से कहां पहुंच गई और इधर वे जड़ी बूटियों की ही बातें कर रहे हैं। और सरकार दान देकर औषधालय बनवा रही है, क्योंकि आयुर्वेद हमारा है ! हद हो गई, इसमें हमारे तुम्हारे का सवाल नहीं है, सवाल यह है कि टेक्नालाजिकली कौन आगे है ? हर चीज में हमें देखना है कि कौन आगे है। और अगर हम सारे जीवन में टेक्नालाजी को ध्यान में लेकर चलेंगे तो मैं आपसे कहता हूं कि पचास साल में हिन्दुस्तान बिना किसी से सहायता लिए खड़ा हो सकता है।

● आप पब्लिक को विश्वास कैसे दिलायेंगे, कन्विंस कैसे करेंगे ?

बिलकुल ही प्रेक्टीकल होने की बात है। बिना पब्लिक को एप्रोच किये उसका माइंड नहीं बदला जा सकता।

● तो आपको पब्लिक का माइंड बदलने के लिये उसके पास आना पड़ेगा।

हां, वह तो मैं कर ही रहा हूं। उसमें आप सहयोगी बनिए। मेरे सामने सवाल यह है कि अगर हिन्दुस्तान का दिमाग उन लोगों की पूजा करता चला जाता है जोकि टेक्नालाजी के खिलाफ हैं तो फिर मैं मानता हूं कि यह मुल्क टेक्नालाजिकली विकसित नहीं हो सकता है। क्योंकि यह दोनों बातें जुड़ी हुई हैं। अब जैसे कि गांधी हैं, वे टेक्नालाजी के बिलकुल ही दुश्मन हैं। अगर टेक्नालाजी के पक्ष में मैं लोगों को खड़ा करना चाहता हूं, तो गांधी मेरे आड़े आते हैं, और कोई आड़े नहीं आता। तो टेक्नालाजी के पक्ष में गांधी से मुझे लड़ना पड़ेगा। गांधी अच्छे आदमी हैं इसमें कोई शक सुबह नहीं। लेकिन ऐसे अच्छे आदमियों को क्या करियेगा ? सवाल तो यह है कि वह जो फिलासफी खड़ी कर रहे हैं वह मुल्क के लिये घातक है। जब भी मैं टेक्नालाजी की बात करता हूं तो सीधा सवाल उठता है कि गांधी के बाबत आपका क्या ख्याल है ? या तो मैं टेक्नालाजी की बात करूं या फिर ग्रामोद्योग की। और मैं मानता हूं कि ग्रामोद्योग की बात करने वाला मुल्क का हत्यारा है, वह मुल्क को डुबो देगा, मार डालेगा। ग्रामोद्योग तो चल रहा है पांच हजार साल से और हम रोज मरते चले गये हैं।

● आप बोले कि गांधी मुल्क का हत्यारा है। संभव है कोई आपकी भी हत्या कर दे।

कोई हर्जा नहीं। एक दफा मेरी भी हत्या हो जाय तो गांधी से मेरी टक्कर सीधी--सीधी हो जाये।

● तो फिर काम रूक जायेगा ?

नहीं, काम नहीं रूकेगा। कोई आदमी टेक्नालाजी के पक्ष में मरेगा तो इससे मुल्क में विचार शुरू होगा। मेरे मरने से लोगों के मन में ख्याल आ सकता है और बात चल सकती है। टेक्नालाजी के लिये कोई मरे तो और पच्चीस लोग खड़े हो जायेंगे, उससे कोई काम रुकने वाला नहीं है। टेक्नालाजी के लिये कोई आज तक मरा ही नहीं इस मुल्क में। किसी के मरने से कुछ काम नहीं रुकता। क्राइस्ट मर गये तो कोई काम रुकता है क्रिश्चयेनिटी का ? मार्क्स मर गये तो कोई कम्युनिज्म रुकता है ? आदमी मर जाते हैं और जिन विचारों के लिये वे मरते हैं वे विचार बलशाली हो जाते हैं। उनके मरने से वे खाद बन जाते हैं उन विचारों के लिये। तो इसमें कोई हर्जा नहीं है, जरा भी हर्ज की बात नहीं है। एक दफा मार डालें तो उससे बड़ा हित हो जाये, उसमें कोई नुकसान नहीं है।

●●●

"प्रेम ही है प्रभु"

(संकलन—श्री क्रियानन्द, सुरेन्द्रनगर)

[भावनगर (गुजरात) में दिनांक १०-१-७० की रात्रि को दिया गया एक प्रवचन]

मेरे प्रिय आत्मन् !

प्रेम तो है सदैव, सब जगह विद्यमान लेकिन बहुत कम सौभाग्यशाली लोग हैं जो प्रेम से परिचित हो पाते हैं। क्योंकि प्रेम की पहली शर्त ही आदमी पूरी नहीं कर पाता। और पहली शर्त पूरी करनी थोड़ी कठिन भी है। पहली शर्त तो यह है कि जो आदमी अपने अहंकार को मिटाने को राजी है, वही केवल प्रेम को उपलब्ध हो सकता है। और हम अपने अहंकार को ही भरने के लिये जीवन भर लगे हुए हैं। बहुत बहुत रूपों में अहंकार को भरने की चेष्टा चलती है। धन से भी, यश से भी, पद से भी, ज्ञान से भी, और यहाँ तक कि धर्म से भी हम अहंकार को भरने की कोशिश करते हैं।

जीवन की सारी दिशाओं से हम एक ही काम करते हैं कि मैं अपने 'मैं' को मजबूत कर लूं। और 'मैं' से बड़ा कोई झूठ नहीं है। 'मैं' एकदम असत्य बात है। लहर का कोई अस्तित्व नहीं है। अस्तित्व तो सागर का है। पत्तों का कोई अस्तित्व नहीं है, अस्तित्व तो वृक्ष का है। और वृक्ष का भी कोई अस्तित्व नही है, अस्तित्व तो पृथ्वी का है। पृथ्वी भी का क्या अस्तित्व है, चांद, तारों और सूरज के बिना। असल में अस्तित्व समग्र का है, total का है। अस्तित्व खण्ड-खण्ड का नहीं है। क्या मैं जी सकता हूं एक क्षण भी अलग होकर? अभी श्वांस जो मेरी है, क्षण भर पहले आपकी रही होगी। और अभी जिस श्वांस को मैं मेरी कह रहा हूं, मैं मेरी कह भी न पाऊँगा और वह श्वास मुझसे बाहर हो जायेगी। और किसी और की हो जायगी। मेरे इस शरीर में जो रक्त है, वह कुछ घड़ी पहले किसी वृक्ष के फल का रस हो सकता है। मेरी जो हड्डी है, वह कुछ समय पहले किसी पत्थर के पास जमा हुआ खनिज हो सकती है। और मैं कल न रहूंगा लेकिन ये सब चीजें रहेंगी, और पृथ्वी में बिखर जायेंगी।

मेरे 'मैं' का अलग अस्तित्व कहां है? १० करोड़ मील दूर है सूरज। वह ठण्डा हो जाय तो हमें यह भी पता न चलेगा कि वो कब ठण्डा हो गया, क्योंकि उसके ठण्डे होते ही हम भी ठण्डे होते हुए होंगे। पता चलाने के लिये भी पीछे कोई नहीं बचेगा, कि सूरज कब ठण्डा हुआ। इतिहास में भी यह बात नहीं लिखी जा सकेगी कि सूरज कब ठण्डा हुआ क्योंकि इतिहास लिखने को भी कोई बचेगा नहीं। १० करोड़ मील जो सूरज है, वो भी हमसे इतना जुड़ा है कि उसके बिना हम क्षण भर भी नहीं हो सकते।

हमारा होना सबके होने पर जब इतना निर्भर है, तो कैसे हम कहें कि 'मैं' हूं। अपने 'मैं' की अलग घोषणा अज्ञान के अतिरिक्त कुछ भी नहीं है। लेकिन उसी घोषणा पर हमारा सारा जीवन चलता है। हम जो भी करते हैं, इस 'मैं' को ध्यान में रखकर करते हैं। इसलिये एक मैं' के असत्य हो जाने के कारण सारा जीवन ही असत्य हो जाता है। और ध्यान रहे कि जहां मैं मजबूत है, वहां प्रेम असम्भव है। क्योंकि प्रेम का मतलब है कि

'मैं' नहीं हूं, तू है। प्रेम का अर्थ ? प्रेम का अर्थ ही है कि 'मैं' नहीं हूं, तू है। और जब पूरे प्राण ये कह पाते हैं कि 'मैं' बिलकुल नहीं हूं, तू ही है, तभी प्रभु के द्वार खुलते हैं। अन्यथा नहीं खुलते।

जलालुद्दीन रूमी ने एक छोटा सा गीत लिखा है। मुझे तो गीत अधूरा मालूम पड़ता है लेकिन फिर भी उसे समझें। रूमी ने लिखा है कि एक प्रेमी अपनी प्रेयसी के द्वार पर गया। उसने द्वार खटखटाया। पीछे से पूछा गया है कि कौन है ? उस प्रेमी ने कहा कि मैं हूं, तेरा प्रेमी, द्वार खोल। लेकिन भीतर सन्नाटा हो गया। ऐसा सन्नाटा जैसे घर में कोई है ही नहीं। वह और जोर से दरवाजा पीटने लगा और कहने लगा—चुप क्यों हो गयी है, द्वार खोल। मैं हूं तेरा प्रेमी। लेकिन फिर कोई उत्तर नहीं मिला। बहुत देर द्वार पीटने पर भीतर से उत्तर आया कि जब तक 'मैं' है तब तक तू प्रेमी कैसे हो सकेगा। ये दोनों बातें एक साथ कैसे हो सकती है ? अभी तू लौट जा। अभी प्रेम के द्वार खुलें, इस योग्य तू नहीं हुआ है। जब 'मैं' मिट जाये तो आना। 'मैं' हूं 'प्रेमी' ये दोनों बातें एक साथ संभव नहीं हैं। जब प्रेमी होता है तो 'मैं' मिट जाता है और जब 'मैं' होता तो प्रेम पैदा नहीं होता है।

लौट गया प्रेमी। बहुत वर्ष बीते वापिस आया है। ऐसा रूमी की कविता में लिखा है कि वापिस लौट आया। द्वार खटखटाये। पीछे से आवाज। फिर वही सवाल, "कौन है ?" अब वह कहता है कि 'मैं' नहीं हूं, तू ही है, द्वार खुल गये। अगर मैं इस कविता को लिखूं, तो अभी भी द्वार नहीं खोल पाऊँगा। क्योंकि अभी भी वह कह रहा है कि 'मैं' नहीं हूं। अभी भी उसे 'मैं' का बोध है। अभी भी वो कह रहा है कि 'मैं' नहीं हूं, तू है। असल में मैं नहीं हूं यह कहने के लिये भी मेरा होना जरूरी है। रूमी नहीं कह पा रहा कि तू ही है। अभी भी 'हम' पूरा नहीं। अगर मैं उस गीत को लिखूं तो उसे फिर वापिस लौटा दूं। क्योंकि उसका 'मैं' मिटा नहीं है। लेकिन रूमी ने गलती की होगी, परमात्मा कभी गलती नहीं करता। उसके दरवाजे पर भूल-चूक नहीं होती है। वहां अगर एक बार भी मैंने कहा कि 'मैं' नहीं हूं, तू ही है, तो भी द्वार बंद ही रहेगा। असल में 'मैं' ही तो द्वार है। अगर 'मैं' गया तो द्वार गया। अगर मैं हूं, मैं रहूं, तो द्वार शेष रह जायगा।

जब मैं कहता हूं, प्रेम ही प्रार्थना है, प्रेम ही परमात्मा है तो कुछ लोग मुझसे पूछते हैं—परमात्मा कोई व्यक्ति नहीं है क्या ? नहीं। परमात्मा कोई व्यक्ति नहीं है। परमात्मा व्यक्ति की भांति सोचा गया और इसीलिये भूल हो गयी है। परमात्मा व्यक्ति नहीं है। परमात्मा शक्ति है, अनुभूति है। और शक्ति को अनुभव करने के लिये ये जो 'मैं' का पत्थर है ये मेरी छाती से उठ जाना चाहिये। अन्यथा उसकी किरणें मेरे हृदय में प्रवेश नहीं कर पायेंगी।

एक झरना है। एक पत्थर रखा है झरने पर। झरना भीतर है और तड़प रहा है कि बाहर प्रकट हो जाये। लेकिन पत्थर उसकी छाती पर है और झरना प्रकट नहीं हो पा रहा है। झरने को लाना नहीं है, पत्थर अलग हुआ कि टूट पड़ेगा। झरना था, पत्थर रोके था ? कौन सी चीज है जो आदमी के प्रेम को रोके हुए है ? और परमात्मा के प्रेम की बात थोड़ी देर के लिये छोड़ भी दें, आदमी आदमी के बीच के प्रेम को कौन रोके हुए है।

विक्टोरिया साम्राज्ञी हो गयी थी। बड़ा साम्राज्य उसे मिला। वह महारानी हो गयी थी। उसका पति साम्राट नहीं था। एक दिन दोनों में कुछ कलह हो गयी। उसके पति ने द्वार बन्द कर लिये हैं और वे क्रोध में दरवाजे के भीतर बैठ गये हैं। विक्टोरिया गयी है। उसने द्वार खटखटाया है और कहा है 'द्वार खोलो।' उसने पूछा, 'कौन है ?' उसने कहा, 'मैं हूं, महारानी विक्टोरिया।' उसने कहा 'द्वार नहीं खुलेंगे।' विक्टोरिया को ख्याल आ गया। उसने कहा, 'नहीं, नहीं। मैं हूं, तुम्हारी विक्टोरिया।' द्वार खुल गया। 'लेकिन पहले द्वार क्यों नहीं खोले ?' पूछा उसने। उसके पति ने कहा

महारानियों के अहंकार को प्रेम के दरवाजे पर कोई जगह नहीं।

लेकिन हम सब दरवाजों पर अहकार को लेकर ही खड़े होते हैं। साधारण जीवन में भी प्रेम का द्वार नहीं खुल पाता, क्योंकि 'मैं' को लेकर ही हम वहाँ मौजूद होते हैं। न कोई पति पत्नी को प्रेम करता, न मां बेटे को प्रेम कर पाती, न कोई बाप को बेटा प्रेम कर पाता, न कोई भाई भाई को प्रेम कर पाता, क्योंकि सब जगह वो 'मैं' मौजूद है।

इसलिये हम प्रेम करते हुए दिखायी पड़ते हैं, बात करते हुए दिखायी पड़ते हैं लेकिन प्रेम नहीं है। अगर दुनिया में प्रेम होता तो दुनिया स्वर्ग होती। इस तरह का नर्क न होती जिस तरह दिखायी पड़ती है। पत्नी कहती है कि मैं पति को प्रेम करती हूं और पति को उस हालत तक पहुंचा देती है कि आत्म-हत्या कर ले या पागल हो जाय। बाप बेटे से कहता है कि मैं तुझे प्रेम प्रेम करता हूं और उसकी गरदन दबाये जाता है, दबाये जाता है। बेटा कहता है बाप को कि मैं तुम्हें प्रेम करता हूं और रोज प्रार्थना करता है कि इस बूढ़े से कब छुटकारा हो जाय। हम सब प्रेम की बात कर रहे हैं। प्रेम की ही चर्चा चल रही है, जो देखो वही प्रेमकर रहा है। अगर इतने लोग नितान्त प्रेम कर रहे हैं तो अब तक पूरी पृथ्वी प्रेम की सुगन्ध से भर जानी चाहिये। लेकिन ऐसा तो दिखायी नहीं पड़ता। पृथ्वी तो घृणा से भरी हुई है। ऐसा मालूम होता है कि प्रेम की इतनी चर्चा भी शायद प्रेम नहीं है उसी बात को छिपाने के लिये चलती है। अक्सर जो नहीं होता है, उसकी हम बात करने लगते हैं। कभी उपवास अगर किया हो तो उस दिन भोजन की ही बात चलती है। उपवास करके देखें और पता चलेगा कि उस दिन भोजन की ही बात चलती है। दो बार दिन उपवास कर लें तो सिवाय भोजन के और कोई बात न चलेगी।

हिटलर के एक कन्सनट्रेशन-कैम्प में एक वैज्ञानिक विचारक फ्रेंकलीन वीटगेग था। उसने अपने संस्मरण लिखे हैं। उसमें लिखा है कि मैं हैरान हो गया, मैंने जिन्दगी में भोजन की कभी चर्चा नहीं की थी। लेकिन जब वे हिटलर के कैम्प में बंद कर दिये गये तो दिन में एक बार रोटी का एक टुकड़ा और एक कप काली चाय मिलती थी। अच्छे घरों के लोग जो संगीत की बातें करते थे कभी, अच्छे घरों के लोग जो दर्शन शास्त्र की बातें करते थे कभी, अच्छे घरों के लोग जो कला की बातें करते थे कभी, परमात्मा की बातें करते थे, प्रार्थना की बातें करते थे, सब १५ दिन के भीतर सिवाय रोटी और चाय के दूसरी बात न करते थे। सिर्फ वही बात चलती और वो जो रोटी का टुकड़ा मिलता उसको भी कोई पूरा नहीं खा लेता था, क्योंकि फिर २४ घंटे की भूख। उसको खीसे (पाकेट) में थोड़ा थोड़ा बचाकर रख लेते। फ्रेंकलीन ने लिखा है कि कई बार हम उसे देख लेते और वापस रख लेते। मन को बड़ी राहत मिल जाती थी और दिन भर बातें करते थे, जैसे बातों से पेट भर जायेगा। फ्रेंकलीन ने लिखा है कि वहाँ जाकर मुझे पता चला कि जीवन में जिस चीज की कमी हो जाती है उसी की चर्चा हो जाती है।

असल में जिन्दगी में जो चीज होती है, उसकी हम चर्चा नहीं करते। परमात्मा पर इतनी किताबें हैं, उसका सिर्फ एक ही कारण है कि जिन्दगी में परमात्मा नहीं है। अगर होते तो इतनी किताबों की कोई जरूरत न रह जाती। प्रेम की इतनी चर्चा, इतने गीत, इतनी कथायें ये सब प्रेम के न होने के सबूत हैं। कभी ख्याल किया है कि स्वस्थ आदमी कभी स्वास्थ्य की चर्चा नहीं करता। लेकिन बीमार सुबह से सांझ तक स्वास्थ्य की ही चर्चा करता है। बीमार अक्सर नेचुरोपैथी की किताबें पढ़ते हुए मिल जायेंगे। प्राकृतिक चिकित्सा पढ़ रहे हैं। कुछ और पढ़ रहे हैं। नुस्खे खोज रहे हैं कि स्वास्थ्य कैसे उपलब्ध हो। और स्वास्थ्य की परिभाषायें खोज रहे हैं कि स्वास्थ्य कैसे उपलब्ध हो। और स्वास्थ्य की परिभाषायें खोज रहे हैं कि स्वास्थ्य क्या है? कैसे मिल सकता है? लेकिन स्वस्थ आदमी को पता नहीं चलता, स्वास्थ्य की बात भी नहीं करता वह।

आपने ख्याल किया है कि सिर में दर्द हो तो ही सिर का पता चलता है, नहीं तो सिर का पता नहीं चलता। पैर में कांटा चुभ जाय तो पैर का पता चलता है। कांटा न चुभे तो पैर का पता नहीं चलता। जहां कोई चीज खटक जाती है, कम हो जाती है, चुभने लगती है, वहां चर्चा शुरू हो जाती हैं। जहाँ कोई चीज पूरी होती है, fulfilled होती है, वहाँ कोई बात ही नहीं होती।

प्रेम की इतनी चर्चा है। मां कह रही है, बेटे से कि मैं तुझे प्रेम करती हूं। सुबह से सांझ तक पति अपनी पत्नि को समझा रहा कि मैं तुझे प्रेम करता हूं। जरूर प्रेम नहीं है। कुछ चीज खटक रही है उसे हम बातचीत से पूरी कर लेना चाहते हैं। लेकिन बातचीत से कोई चीज पूरी नहीं होती। और ये जिंदगी में सब तरफ चलता है। परमात्मा के साथ भी यही हुआ है। इतने मंदिर, इतने मस्जिद, इतनी किताबें, इतने पंडित, इतने पुरोहित, ये सब जीवन में परमात्मा के अभाव की खबरें देते हैं। कोई चीज खटक रही है तो मंदिर बना लिया है। कोई चीज खटक रही है, तो मस्जिद बना लिया है। कोई चीज खटक रही है, तो किताब पढ़ रहे हैं। कोई चीज कम मालूम पड़ रही है। लेकिन न मंदिर पूरा कर सकते हैं, न मस्जिद पूरी कर सकते हैं। न कोई पंडित न कोई मौलवी—कोई पूरा नहीं कर सकता। क्योंकि पूरी बातचीत से नहीं हो सकती है, बात। जिंदगी बातचीत नहीं है। जिंदगी एक अनुभव है, अनुभव से पूरी हो सकती है। ये प्रेम मेरे सामान्य जीवन में ही नहीं है तो परमात्मा की तरफ उसके उठने का कोई सवाल ही नहीं होता।

जब हमारे सामान्य जीवन में प्रेम overflow होता है—इस बात को ठीक से समझ लें। जब हमारे जीवन में प्रेम इतना भर जाता है कि न पत्नी सम्हाल पाती, न बेटा सम्हाल पाता, न मां सम्हाल पाती, न बाप सम्हाल पाता, न मित्र सम्हाल पाते, प्रेम इतना ज्यादा हो जाता है और प्रेम को झेलने वाले इतने कम पड़ जाते हैं कि प्रेम की लहरें फैलने लगती हैं। और जब प्रेम को पृथ्वी भी नहीं सम्हाल पाती, और जब प्रेम को चांद तारे भी नहीं सम्हाल पाते और प्रेम बढ़ता चला जाता है और अन्ततः जो सम्हाल सकता है प्रेम की अनन्तता को वह उपलब्ध हो जाता है। जितना बड़ा प्रेम, उतना बड़ा प्रेम पात्र मिल जाता है। लेकिन छोटा प्रेम ही नहीं है तो बड़े का सवाल नहीं है। छोटे से शुरू होना चाहिये। और अब तक की मनुष्य संस्कृति ने एक उल्टा ख्याल ले लिया है। उसका ख्याल है कि छोटे छोटे प्रेम तोड़ दो, तब तुम परमात्मा को प्रेम कर सकते हो। साधु-सन्यासी बहुत जहरीली बात हजारों साल से आदमी को समझा रहे हैं। वे कह रहे हैं, पत्नी को प्रेम करना छोड़ दो यदि परमात्मा को प्रेम करना है। वे यह कह रहे हैं कि बूंद बूंद प्रेम मत करो, अगर सागर से प्रेम करना है तो। लेकिन उन्हें पता नहीं है कि सागर बूंद बूंद के जोड़ के अतिरिक्त और कुछ नहीं है।

दुनिया की सबसे बड़ी नदी है अमेजान। लेकिन अमेजान जहाँ से निकलती है वहां देखकर बड़ा चमत्कार मालूम पड़ता है। सारे संसार के साधु-सन्यासियों को, जिन्दा को, मुर्दा को, सबको अमेजान के मूल स्रोत पर खड़ाकर देना चाहिये। जहां से अमेजान निकलती है, वहां सिर्फ एक एक बूंद टपकती है, २० सेकेण्ड में एक बूंद टपकती है। २० सेकेण्ड में बूंद गिरती है, फिर २० सेकेण्ड उसका कोई पता नहीं चलता। फिर एक बूंद गिरती है। एक एक बूंद करके २०-२० सेकेण्ड में गिरने वाली बूंद से दुनिया की सबसे बड़ी नदी बहती है अमेजान। उससे बड़ी कोई नदी नहीं है। अगर साधु-सन्यासी होते तो वे कह देते कहीं बूंद-बूंद से नदी बनी है ? बंद करो ये बूंद बूंद। हमें तो नदी चाहिये। बूंद बूंद तो बंद हो जाती लेकिन नदी भी बन्द हो जाती। नदी विस्तार है। जो प्रेम पत्नी की तरफ है उसको तोड़ करके परमात्मा के तरफ न कोई जा सकता है, न गया है। क्योंकि जो पत्नी की तरफ बूंद बूंद है, वह नदी की तरह हो जायेगा। तो ही परमात्मा की तरफ जाया जा सकता है।

पत्नी की तरफ जो प्रेम है, वह और बड़ा हो जाय, बेटे की तरफ जो प्रेम है वह और बड़ा हो जाय, बाप की तरफ जो प्रेम है, वह और बड़ा हो जाय। वह बढ़ता जाय, बढ़ता जाय। वह इतना हो जाय कि बाप उसे सम्हाल न सके। मां उसे सम्हाल न सके, पत्नी उसे सम्हाल न सके। फिर वह प्रेम और फैलने लगे, फैलने लगे, और फैलता चला जाय। जिस दिन प्रेम सब सीमाओं के पार फैल जाता है, असीम हो जाता है, उस दिन वह परमात्मा का द्वार बन जाता है। लेकिन हम सोचते हैं कि सब तरफ से प्रेम को रोक लें फिर परमात्मा से प्रेम करेंगे। यह असम्भव है। और इस रोकने में परमात्मा तक हम नहीं जाते। वो दूसरी बात भी समझ लेनी जरूरी है।

जब कोई व्यक्ति प्रेम रोकता है तो अहंकार बढ़ता है। ध्यान रहे, सिर्फ प्रेम तोड़ता है अहंकार को। जब एक व्यक्ति अपनी मां को प्रेम करता है, तो मां के पास वह अहंकारी नहीं रह जाता है। इसलिये मां के पास जो राहत मिलती है वह किसी के पास नहीं मिलती। मां की गोद में वह सिर रखकर लेट जाता है। हो सकता है कि जिंदगी में बड़ा सेनापति हो, हो सकता है कि जिंदगी में बड़ी इज्जत हो, हजारों लाखों लोग फूल मालायें पहनाते हों। लेकिन मां की शरणों में सिर रखकर लेट जाता है। वहां कोई अहंकार नहीं है। मां की गोद जो इतनी शांति देती है, वह मां के गोद की शांति नहीं है। ध्यान रहे, मां की गोद क्या शांति दे सकती है। वह शांति है, अहंकार के न होने की। उन क्षणों में वह अहंकार में नहीं है। अकड़ा हुआ नहीं है। मां के सामने अहंकार नहीं रखा है। तो शान्ति मिल गयी है।

एक व्यक्ति अपनी प्रेयसी के पास होता है तो सब अहंकार भूल जाता है। तो एक नये आनन्द का अनुभव होता है। जितना हम प्रेम करते हैं, उतना अहंकार टूटता है और जितना हम अहंकार तोड़ते हैं, उतना प्रेम बढ़ता जाता है। लेकिन अगर किसी ने सब तरफ से प्रेम के द्वार बंद कर दिये और कहा कि दूर, दूर प्रेम, इन्कार है। सब तरफ से बंद कर दिये द्वार, तो उस आदमी का अहंकार मजबूत हो जायेगा। इसलिये सन्यासियों से ज्यादा अहंकारी आदमी खोजना मुश्किल है। उनके पास सिर्फ अहंकार रह जाता है, मजबूत, कठोर पत्थर की तरह। क्योंकि सब तरफ से प्रेम तोड़ लिया गया है। अगर सन्यासी के भीतर हम जायें तो ब्रह्म को पाना बहुत मुश्किल है, अहंकार की सख्त, मजबूत, Frozen, पत्थर की प्रतिमा वहां मिलेगी। लेकिन वह भी कह सकता है कि अहं ब्रह्मास्मि। मैं ब्रह्म हूं। वह कह सकता है। ये अहंकार की घोषणा भी हो सकती है कि मैं ब्रह्म हूं। जिसे यह अनुभव हुआ होगा कि मैं ब्रह्म हूं, उसे साथ में यह भी अनुभव हुआ होगा कि 'मैं' नहीं हूं, तभी 'जो है' वह ब्रह्म है। अच्छा हो कि मैं ब्रह्म हूं इसकी जगह कहें कि जब 'मैं' नहीं हूं तभी ब्रह्म है। संन्यासी अहंकार से भर जाता है प्रेम को तोड़कर। त्यागी अहंकार से भर जाते हैं, प्रेम को तोड़कर। इधर हमने प्रेम तोड़ा, उधर अहंकार बढ़ा। और मैं कहता हूं कि अगर अहंकार है तो परमात्मा के द्वार पर प्रवेश नहीं है।

तो हम जितना प्रेम कर सकते हैं करें। लेकिन हजारों साल से सिखाया गया है कि नश्वर को प्रेम मत करना, नाशवान को प्रेम मत करना, मिटने वाले को प्रेम मत करना। सुबह फूल खिलता है, सांझ मुरझा जाता है। पुरानी शिक्षायें कहती हैं कि फूल को प्रेम मत करना। क्योंकि वह तो सुबह खिलता है और सांझ मुरझा जाता है। वे कहते हैं कि ऐसे फूल को प्रेम करना जो कभी न मुरझाता हो। पत्थर का फूल बनाना पड़ेगा। फिर पत्थर का फूल फूल हो सकता है? हाँ, वह कभी न मुरझायेगा यह तो पक्का है। क्योंकि वह कभी खिला ही नहीं है। क्योंकि जो खिला है वह मुरझायेगा। जो खिला नहीं है, वह नहीं मुरझायेगा। चूंकि वह खिला ही नहीं है, इसलिये कभी मुरझायेगा ही नहीं। लेकिन पत्थर का फूल, फूल होता है? असल में फूल के फूल होने में उसका मुरझा जाना भी रस लाता है। वो मुरझाता है

इसीलिये जीवित है। वो मर जायेगा सांझ, इसीलिये जिन्दा है। सुबह पैदा हुआ है इसीलिये सांझ मरेगा। लेकिन हमने कहा है कि नाशवान को प्रेम मत करना और इस जगत में जो भी दिखायी पड़ता है, सब नाशवान है। इस जगत में क्या है जो अविनाशी है? दिखायी तो नहीं पड़ता? सब नाशवान दिखायी पड़ता है। राम भी नाशवान हैं, और कृष्ण भी और बुद्ध भी और महावीर भी। नाशवान क्या नहीं है? सुबह फूल खिलता है और ८० साल पहले बुद्ध खिलते हैं और ८० साल बाद मुरझा जाते हैं। इस जगत में क्या है जो नाशवान नहीं है? इस जगत में सभी तो नाशवान मालूम पड़ रहा है। लेकिन शिक्षायें कहती हैं कि नाशवान को प्रेम मत करना, अविनाशी को प्रेम करना। अविनाशी कहाँ है? वह कहीं दिखायी नहीं पड़ता, वह कहीं नहीं मिलता, उससे कहीं मुलाकात नहीं होती। तो नाशवान से प्रेम मत करना, यह तो हो जाता है, लेकिन वह अविनाशी मिलता नहीं है। इसलिये फिर प्रेम के होने का उपाय बन्द हो जाता है।

मैं यह कहना चाहता हूं कि नाशवान को प्रेम करना और जब कोई नाशवान को प्रेम करता है तो नाशवान अविनाशी हो जाता है। जैसे ही कोई नाशवान को प्रेम की दृष्टि से देखता है, वह फिर अविनाशी हो जाता है। असल में सब तरफ अविनाशी है, अगर हमारे पास प्रेम की आंख हो। तो फिर कुछ भी नाशवान नहीं है। क्योंकि जब फूल कुम्हलाता है तब भी हम जानते हैं कि वही फूल कहीं और खिलना शुरू हो गया है। प्रेम की आंख बिदा करना जानती ही नहीं। प्रेम की आंख ने कभी किसी को बिदा किया ही नहीं है।

रामकृष्ण की मृत्यु हुई। मृत्यु के पहले उनकी पत्नी शारदा बहुत दुखित थी, चिन्तित थी, क्योंकि पता हो गया था कि मृत्यु आ रही है और पता भी बहुत अद्भुत ढंग से हुआ था। रामकृष्ण को भोजन में बड़ा रस था। इतना रस था कि वे बीच बीच में ब्रह्मचर्चा छोड़कर चौके में पहुंचकर पता लगा आते थे कि क्या बन रहा है। सब को तकलीफ होती थी। शिष्यों को बड़ा दुख होता था कि कैसे सन्त हो, लोग क्या कहेंगे? यह एक वृत्ति छोड़ दो तो कुछ कमी नहीं है। शारदा, उनकी पत्नी भी कहतीं कि मुझे बड़ा सकोच लगता है कि आप ऐसा पूछने चले आते हैं। ब्रह्म-ज्ञानी के लिये यह क्या है? रामकृष्ण हँसते थे। लेकिन एक दिन शारदा ने कहा कि नहीं, यह अच्छा मालूम नहीं होता, गांव में चर्चा होती है कि रामकृष्ण भी कोई सन्त है? रामकृष्ण ने कहा, 'तुझे पता नहीं है कि मेरी नौका के सब तार किनारे से छूट गये हैं। एक तार किसी तरह मैंने बाँध रखा है कि किनारे रुका रहूं। और जिस दिन मैं भोजन की ओर अरुचि दिखाऊँ, तू जान लेना कि बस ३ दिन और नौका नदी के तट पर है, फिर छूट जायेगी।'

एक दिन शारदा लेकर आयी है, उनके मरने के ३ दिन पहले थाली। वे लेटे थे। वे लेटे नहीं रह जाते थे, थाली कोई ले आये तो उठकर खड़े हो जाते थे। उन्होंने करवट बदल ली। उस तरफ पीठ कर ली। तो शारदा को याद आया और हाथ से थाली छूटकर गिर गयी। रामकृष्ण ने कहा, 'रोओ मत। क्योंकि सदा तो तुमने समझाया था। अब मैं पक्का सन्त हो गया। अब रो मत। लेकिन बस अब ३ दिन और।' तो वे ३ दिन बड़ी कठिनाई के थे। आदमी अचानक मर जाता है तो भी ठीक है। लेकिन मरने का अगर पता चल जाय तो? तो शारदा उनसे बार बार कहती कि तुम न जाओ। तो वे कहते कि तुमने मुझे प्रेम किया है? अगर प्रेम किया है, तो नहीं मरूंगा। तब वह कहती कि मेरे प्रेम करने से क्या फर्क पड़ेगा? तब वे कहते कि अगर तुमने प्रेम किया है तो नहीं मरूंगा। और यही हुआ। रामकृष्ण मर गये। जिन्होंने भी उन्हें प्रेम नहीं किया था उन्होंने देखा कि वे मर गये। क्योंकि प्रेम जिसके पास नहीं है, वह शरीर से गहरे नहीं देख पाता। शरीर ही दिखायी पड़ता है आंखों से तो। प्रेम की आंख से और भीतर जो है वह दिखायी पड़ने लगता है। शरीर तो नाशवान है, भीतर कुछ है। लेकिन वह दिखायी नहीं

पड़ता। प्रेम उसको पकड़ लेता है, यह जो भीतर है। फिर उन्होंने चिता रचायी। लोग आ गये और शारदा से कहने लगे, चूड़ियां तोड़ो। पर शारदा ने कहा, वे तो मरे ही नहीं हैं। हिन्दुस्तान में पहली विधवा है शारदा जिसने चूड़ियां तोड़ने से इन्कार कर दिया। चूड़ियाँ जिन्दगी भर नहीं तोड़ीं। माथे का टीका नहीं पोंछा। लोग समझे कि पागल हो गयी है। असल में प्रेम करने वाले को लोग पागल ही समझते हैं। वे समझे कि पागल हो गयी है। सदमे में पागल हो गयी है। लेकिन उसकी आंखों में आंसू न आया। और रोज रात वह जहां रामकृष्ण सोते थे, वहां बिस्तर कर देती और कहती कि परमहंस प्रकाश बुझा दूँ ? लोग समझे कि बिल्कुल अब तो पागल हो गयी है। खाने के वक्त कहती कि चलें, भोजन तैयार हो गया है। आज बीच में आये नहीं देखने ? तो लोग समझे कि पागल हो गयी है। लेकिन प्रेमी सदा से पागल रहा है। तय करना मुश्किल है अभी कि प्रेमी पागल होते हैं या कि वे जो प्रेमियों को पागल समझते हैं, वे पागल होते हैं। असल में गैर-प्रेमियों की संख्या इतनी ज्यादा है कि अभी तय करना बहुत मुश्किल है। लेकिन अगर पृथ्वी पर प्रेमियों की संख्या बढ़ जायेगी, तो जो प्रेम नहीं कर पायेगा, उसे हम पागल समझेंगे। वह पागल है ही। क्योंकि जो प्रेम नहीं कर पाता वह अहंकार में जीता है और अहंकार में जो जीता है, वह विक्षिप्त हो जाता है, पागल हो जाता है।

ये मैं यह कह रहा हूं कि नाशवान को प्रेम मत करना इस शिक्षा ने परमात्मा तक जाने में बाधा डाल दी है। क्योंकि नाशवान ही चारों तरफ दिखायी पड़ता है। अविनाशी तो दिखायी नहीं पड़ता। और वह उसे दिखायी पड़ेगा, जो नाशवान को प्रेम करेगा। जो उसमें है, वह बच जायेगा और अविनाशी दिखायी पड़ जायेगा। अविनाशी को देखने का रास्ता ही 'जो है' उसे प्रेम करना है। लेकिन हमने जो तरकीब जुटायी वो यह थी कि विनाशी को प्रेम मत करो, नाशवान को प्रेम मत करो, नश्वर को प्रेम मत करो, क्षण-भंगुर को प्रेम मत करो।

आज दोपहर ही कोई मुझसे पूछ रहा था (इसी सम्बन्ध में)। मैंने उससे एक घटना कही। जापान में एक फकीर हुआ है, रिन्जाई। उसका गुरु मर गया है। रिन्जाई बहुत प्रसन्न फकीर था। लाखों लोग उसे पूजते थे। उसके गुरू को भी इज्जत रिन्जाई के कारण ही थी। जब गुरू मर गया तो लाखों लोग आये और रिन्जाई को देखा कि वह छाती पीट-पीटकर रो रहा है। बेहाल हुआ जा रहा है, आंसू बहे जा रहे हैं। तो मित्रों ने कहा, 'यह क्या करते हो ? रोते हो ? लोग क्या कहेंगे ? लोग आ रहे हैं, बंद करो रोना। हम तो तुम्हें ब्रह्म ज्ञानी समझते हैं और ब्रह्म-ज्ञानी रोये तो हम लोगों पर क्या असर पड़ेगा ? और तुम्हीं तो समझाते थे कि आत्मा अमर है। और रोते क्यों हो ? जब आत्मा अमर है तो रो क्यों रहे हो ? गुरू मरे तो नहीं ?

रिन्जाई हंसने लगा। आंख से आँसू भी बहते रहे और उसे हंसी भी आ गयी। वह हंसने लगा और उसने कहा कि नहीं, जो आत्मा अमर है उसके लिये नहीं रो रहा हूं, लेकिन वो जो शरीर मर गया है, वह भी बहुत प्यारा था। उसके लिये रो रहा हूं। और इसलिये भी रो रहा हूं कि इस प्यारे शरीर के कारण ही वह आत्मा इस पृथ्वी पर उतर सकी थी। शरीर वाहन था, माध्यम था, द्वार था। यह शरीर द्वार था जहां से हमने उस अमृत को झांका, खिड़की थी, ये Window थी। आज वह पीछे का यात्री तो चला गया है और ये खिड़की, ये द्वार रिक्त होकर पड़ा है। मैं इस द्वार के लिये रो रहा हूं। क्योंकि इस द्वार के बिना हम उस अमृत आत्मा को देख भी कैसे पाते। तो क्या इतना भी धन्यवाद न दूँ।' और फिर वह कहने लगा कि लोग अगर मुझे अज्ञानी समझते हों तो क्या वे मुझे ज्ञानी समझें इसलिये मैं अपने आंसुओं को रोक लूं ? असल में बहुत से ज्ञानी इसी तरह ज्ञानी बने हुए है कि लोग क्या समझते हैं, इस पर वे ज्ञानी बने हुए हैं। लोगों की समझ उनके ज्ञान को तय कर रही है। अगर लोग समझते हैं कि मुंह पर पट्टी बांधना ज्ञान है, तो वे बेचारे मुंह पर पट्टी बांधे हुए बैठे हैं। और कई मुँह पर पट्टी बांधे हुए लोग

मुझे मिलते हैं। उनसे मैं पूछता हूं कि ये क्या पागलपन हैं ? वे कहते हैं कि अगर हम इसे अलग कर दें तो लोग हमें साधु ही न समझेंगे।

साधुओं के भी लेबल हैं, Definitions हैं। कोई गेरूआ वस्त्र इसलिए पहने हुए है कि गेरूआ वस्त्र न पहने तो लोग साधु न समझेंगे। कोई इसलिए ये कर रहा है, कोई इसलिए वो कर रहा है। ऐसा न करेंगे तो लोग भी न समझेंगे। लेकिन ध्यान रहे कि जो आदमी लोगों पर नजर रखे हुए है कि लोगों की नजर से तय होगा कि मैं साधु हूं, वह आदमी साधु नहीं है। क्योंकि जो साधु है, वह 'है'। लोगों के मत से कोई सम्बन्ध नहीं है इस बात का कि लोग क्या समझेंगे। लोगों की नजर को देखकर जो अपना व्यवहार कर रहा है, वह किसी नाटक में लगा हो सकता है, अभिनय में। लेकिन साधु नहीं हो सकता है।

ये जो शिक्षायें हमें दी गयी हैं, उन शिक्षाओं ने हमें जड़ किया है, पाखण्डी, Hypocrate बनाया है। लेकिन प्रेम नहीं पनप पाया है। नाशवान को प्रेम करना पड़ेगा ताकि अविनाशी की खोज हो सके।

तो जब मैं कहता हूं—प्रेम है परमात्मा, तो मैं यह कहता हूं कि प्रेम है द्वार, जिससे हम झांक पायेंगे परमात्मा को। लेकिन किसको प्रेम करें ? कुछ लोग हैं जो कहते हैं कि मनुष्यता को प्रेम करते हैं। मनुष्यता को प्रेम करने वाले लोग बहुत बेइमान हैं। बेइमान इसलिये हैं कि मनुष्य को प्रेम नहीं करते हैं, मनुष्यता को प्रेम करते हैं। मनुष्यता कहीं है नहीं। मनुष्यता को कहीं खोजा नहीं गया है अब तक। कहीं जायें खोजने तो मिलेगी भी नहीं। जब भी मिलेगा, मनुष्य मिलेगा। जहां भी मिलेगा, मनुष्य मिलेगा, ठोस, देहधारी। मनुष्यता तो कहीं भी नहीं मिलेगी। तो जिन लोगों को प्रेम से बचना है उनके लिये एक बहुत बढ़िया तरकीब यह है कि वे कहें कि हम तो मनुष्यता को प्रेम करते हैं। मनुष्य को हम प्रेम नहीं करते हैं, मनुष्यता को प्रेम करते हैं।

जिन लोगों को प्रेम से बचना है वे कहते हैं कि हम प्रकृति से प्रेम नहीं करते हैं, हम तो परमात्मा से प्रेम करते हैं। लेकिन जहां भी जाओ, मिलेगी प्रकृति परमात्मा नहीं। चाहे हिमालय पर जाओ और चाहे तिब्बत जाओ और चाहे कहीं जंगल और तीर्थ जाओ, मिलेगी प्रकृति, परमात्मा नहीं। जो मिलती है, वो सदा प्रकृति है। जो मिलता है, वह सदा मनुष्य है। लेकिन हमने abstract, हवाई बातें निकाल दी हैं, जो कहीं भी नहीं हैं। और उनको हम प्रेम कर रहे हैं। उसका यह परिणाम हुआ है कि एक आदमी मंदिर भागा जा रहा है, हाथ मे थाली लिये हुये है। भगवान को प्रसाद लगाने जा रहा है। और बगल में एक भगवान भूखा मर रहा है, वह उसकी तरफ देखता भी नहीं है। वह भागा चला जा रहा है। वह भगवान को प्रेम करता है। ये तो आदमी ठहरा, नाशवान। ये तो मर ही जायेगा। वह तो पत्थर की मूर्ति को प्रेम करता है। जो कभी नहीं मरती, उसको भोग लगाने जा रहा है। अगर दुनिया कभी समझदार होगी तो इन सबकी गिनती पागलों में नहीं होगी तो किनमें होगी ? जो पत्थर की मूर्ति को भोजन दिये चले जा रहे हैं और एक जिन्दा आदमी मर रहा है।

एकनाथ लौटते थे, रामेश्वरम की तरफ और कुछ मित्र थे, वो तीर्थ-यात्रा को गये हुए थे, तो एकनाथ भी साथ गये। लौट रहे हैं, काशी से पानी लेकर, रामेश्वरम के भगवान को चढ़ाने। लम्बी यात्रा है और एक गहरे सूखे मरुस्थल में जहाँ दोपहर का सूरज तप रहा है और रेत ही रेत है, कहीं पानी नहीं है, एक प्यासा गधा तड़प रहा है। और गधा जो है, बिल्कुल गैर-आध्यात्मिक प्राणी मालूम पड़ता है। इस गधे को कौन spiritual मानेगा, गधे को कौन आध्यात्मिक मान सकता है ? आदमी को नहीं मानते लोग, तो गधे को कौन मानेगा ? वह तड़प रहा है, पानी सबके पास है। गंगा का जल सबके पास है। लेकिन वे ले जा रहे हैं, रामेश्वरम के पत्थर पर पानी चढ़ाने। वे सब मुँह फेर लेते हैं, गधे को मरते देखकर। लेकिन एकनाथ ?

एकनाथ रुक जाते हैं और अपने कमण्डल से पानी उस गधे को पिलाने लगते हैं। सारे लोग चिल्लाते हैं कि यह क्या कर रहे हो पाप। जो पानी भगवान के लिये लाये हो, वह गधे को पिला रहे हो? एकनाथ कहते हैं कि भगवान यहां प्यासा तड़प रहा था, मेरा तीर्थ तो पूरा हो गया। मैं वापस लौट जाता हूं मेरी प्रार्थना तो सुन ली गयी। वो जो रामेश्वरम में बैठा है, वह यहीं आ गया है। तब वे कहते हैं कि तुम पागल तो नहीं हो गये? इस गधे को और भगवान कहते हो? वे एकनाथ को, यह समझकर कि वह भ्रष्ट हुआ, वह पागल हुआ, अपनी तीर्थ-यात्रा पर आगे निकल गये हैं।

भगवान को प्रेम करने वाला आदमी को कैसे प्रेम करे? आदमियत को प्रेम करने वाला आदमी को कैसे प्रेम करे? अविनाशी को प्रेम करने वाला नाशवान को कैसे प्रेम करे? परमात्मा को प्रेम करने वाला प्रकृति को कैसे प्रेम करे? नहीं, सौंदर्य को प्रेम करने वाला फूल को कैसे प्रेम करे? वह तो कहता है कि हम सौंदर्य को प्रेम करते हैं। हालांकि सौंदर्य कहीं नहीं मिलता है। कहीं कोई चेहरा मिलता है, कहीं कोई फूल मिलता है, कहीं कोई आंखें मिलती हैं। अब तक तो नहीं मिला। आदमी हजारों साल से खोज रहा है, सौंदर्य तो कहीं नहीं मिला। जब भी मिलता है, सुन्दर मिलता है। सौंदर्य नहीं मिलता। लेकिन सौंदर्य को प्रेम करने वाले लोग कहते हैं, आदमी को क्या प्रेम करते हो, सौंदर्य को प्रेम करो। फूल को क्या प्रेम कर रहे हो, सौंदर्य को प्रेम करो। उनकी बातबाजी, उनकी गलत बातों ने ही आदमी को बहुत दिनों से परेशान किये हुए हैं। नहीं, सुन्दर को प्रेम करना पड़ेगा और जब सुन्दर को प्रेम किया जाता है, तो सौंदर्य मिल जाता है।

प्रेम करना पड़ेगा पदार्थ को, प्रकृति को, वो 'जो है' चारों तरफ उसको। जब उसको प्रेम किया जाता है तो उसमें जो छिपा है, वह मिल जाता है।

लेकिन हमने एक आकाश में भगवान बिठा रखा है। अब जरा मुश्किल पड़ेगी उस आकाश के भगवान को। क्योंकि ये आर्मस्ट्रांग और उनके साथी मानते ही नहीं हैं। ये आकाश में खोजने यात्रा को निकल गये हैं। भगवान पहले हिमालय पर रहता था और पहले छोटी-छोटी पहाड़ियों पर रहता था। लेकिन आदमी पहाड़ियों पर चढ़ गया। और उसने कहा, 'कहां है, तुम्हारा भगवान?' तब भगवान का डेरा हमें पता न पड़ा। और ऊपर रख दिया हिमालय पर। पर आदमी नहीं माना। वह हिमालय पर भी चला गया। फिर हमने उसे ऐसे पर्वत पर रखा हुआ था, जहां चांद की किरणें भी नहीं पड़ती थीं। पर वहां भी आदमी चढ़ गया। वो कहीं मिला नहीं, तो फिर हमने उसको चांद तारों पर बिठा दिया है। अब बड़ी मुश्किल में है भगवान। अब चांद तारों पर आदमी पहुंचेगा और वहां भी नहीं पायेगा, फिर क्या होगा? नहीं, यह भगवान नहीं है मुसीबत में। ये 'हमारा भगवान' मुसीबत में है, झूठा जो हमने कल्पित किया हुआ है। भगवान तो यहीं है। सब तरफ मौजूद है। उसे चांद तारे पर और एव्हरेस्ट की चोटी पर रखने की जरूरत नहीं है।

मैंने सुनी है एक कहानी—जब भगवान ने सारी दुनिया बनाई और आदमी बनाया तो आदमी को बनाकर वह बड़ी मुसीबत में पड़ गया। पड़ ही गया होगा। आदमी को देखकर भरोसा आता है कि कहानी सच ही होनी चाहिये। क्योंकि जब तक आदमी नहीं बनाया था, तब तक सब ठीक था। आदमी बनाया कि मुसीबत शुरू हो गयी। कभी आदमी घिराव कर देता, कभी हड़ताल कर देता, कभी सत्याग्रह की धमकी दे देता। कभी कुछ करता, कभी कुछ करता। भगवान ने देवताओं को बुलाया और उनसे कहा कि एक प्रार्थना है। कोई तरकीब निकालो, मैं आदमी से बचना चाहता हूं। ये आदमी ने मुझे मुश्किल में डाल दिया है। ये तो २४ घंटे शिकायत करता है, जिसका कोई हिसाब नहीं है। अन्त नहीं है, शिकायतों का। और मैं एक की शिकायत पूरी करूँ, तो ५० की शिकायतें खड़ी हो जाती हैं। ये तो बहुत मुश्किल है। ये कैसे ठीक होगा। मुझे बचाओ। मैं कहाँ छिप जाऊं? किसी ने कहा एव्हरेस्ट

पर छिप जायें, गौरीशंकर पर चले जायें। भगवान ने कहा तुम्हें पता नहीं, बहुत जल्दी एक आदमी होगा तेनसिंग, हिलेरी। वे चढ़ जायेंगे ऊपर। फिर क्या होगा और ज्यादा देर नहीं है। बहुत कम ही समय है वे जल्द चढ़ जायेंगे। तो किसी ने कहा कि चाँद पर बैठ जाओ। तो उसने कहा, तुम्हें कुछ पता नहीं है आमस्ट्रांग वहाँ पहुंचने की तैयारी कर लेगा। बहुत तरकीबें बतायीं लेकिन उसने (भगवान ने) कहा, आदमी सब जगह पहुंच जायेगा। फिर एक बूढ़े देवता ने उसके कान में कहा कि तुम एक काम करो। आदमी में ही छिप जाओ। और भगवान ने कहा कि ठीक। यह बात जंचती है। वहां आदमी कभी नहीं पहुंचेगा।

वो वहीं छिप गया है। वो वहीं बैठा है छिपकर। वो सब में छिप गया है। अलग जगह खोजता तो पकड़ में आ जाता। वो सब में छिप गया है। जैसे नमक पानी में छिपा है, सागर के। उसे कहीं से भी चखो, वो सागर का पानी नमकीन ही है। ऐसे ही परमात्मा छिपा है, सब में। कहीं से भी प्रेम करें, कहीं से भी चखें, सब जगह मिल जाता है। लेकिन प्रेम उसे चखने का रास्ता है। कहीं से तो शुरू करें। लेकिन नाशवान–नाशवान सब तरफ घिरा है। शुरू कैसे करें ? ऐसी हमारी हालत है जैसे कोई आदमी हमसे कहे कि लहरों को कभी प्रेम मत करना, सागर को प्रेम करना। और लहरें ही लहरें दिखायी पड़ती हैं। सागर दिखायी नहीं पड़ता है। हम मुश्किल में पड़ जायेंगे। हम दिक्कत में पड़ जायेंगे। हम लहर को प्रेम न करें, सागर को प्रेम करें। और सागर दिखता नहीं है। लहर ही लहर दिखायी पड़ती है। हाँ, कोई लहर को प्रेम करे और लहर में डूब जाय तो सागर में पहुंच जाता है। लेकिन उसके लिये तो डूबना पड़े और लहर के अतिरिक्त डूबने का कोई रास्ता नहीं है, लहर से मिलना ही पड़ेगा।

तो जब मैं कहता हूं प्रेम तो मेरा मतलब किसी हवाई कल्पना से नहीं है। मेरा मतलब है, प्रेम हमारे चारों तरफ जो भी मौजूद है उससे। लेकिन कैसे हम प्रेम करें ? पहली शर्त और सबसे कठिन शर्त यह है कि हमें मिटना पड़े, जब भी हम प्रेम करने जाँय। हमें अपने को खोना पड़े।

जीसस का एक वचन है। बहुत अद्भुत है। जीसस ने कहा है, 'जो अपने को बचायेगा वह मिट जायेगा और जो अपने को मिटा देता है, वह अपने को बचा लेता है।' उल्टी बात लगती है। कहते हैं 'जो अपने को मिटायेगा वह बच जायेगा और जो अपने को बचायेगा वह मिट जायेगा।' वे ठीक कहते हैं। अगर मैंने अपने 'मैं' को बचाया तो मैं मिटा क्योंकि 'मैं' एक झूठ है। उसके साथ बचना नहीं हो सकता है। और अगर मैंने अपने 'मैं' को बिखेर दिया, नहीं बचाया, तो मैं बच जाऊंगा क्योंकि 'मैं' के अलावा मेरे भीतर मिटने वाली और कोई चीज नहीं है, जो मिट जाये।

पर इस 'मैं' को हम कैसे मिटायें ? असल में मिटाने की भाषा भी खतरनाक है। खतरनाक इसलिये है कि हम अगर 'मैं' को मिटाने गये तो भी मन में यह होता है कि मैं मिटा रहा हूं। तो 'मैं' और मजबूत होता है। एक आदमी हमारे पास आता है और कहता है, 'मैं तो कुछ भी नहीं हूं, आपके पैरों की धूल हूं।' लेकिन जरा उसकी आंखों में देखें। जब वह कह रहा है कि मैं कुछ भी नहीं हूं, तब भी वह कह रहा है कि कुछ हूं। जब एक आदमी कह रहा है कि मैं बिल्कुल विनम्र हूं। मुझसे ज्यादा विनम्र कोई भी नहीं है। तब भी उसके चेहरे की रौनक को देखें। वह यह कह रहा है कि अपने से आगे कोई नहीं है, इस मामले में। सबसे आगे मैं हूं। अगर उससे कह दें कि तुमसे भी ज्यादा विनम्र आदमी गाँव में आ गया है तो जरा वह दुखी हो जायेगा। वह पता लगा ले आता है कि गलत कहते थे आप। मैंने उस आदमी का पता लगाया है। वह इतना विनम्र नहीं है, जितना मैं हूं।

अगर हम अपने 'मैं' को मिटाने भी लगे तो भी 'मैं' मजबूत हो जाता है। तो 'मैं' को मिटाने में नहीं

लगा जा सकता। असल बात यह है कि जो नहीं है उसे मिटायेंगे भी कैसे? अगर हम अंधेरे को मिटाने में लग जावें, तो कभी भी मिटा न सकेंगे। अंधेरा है ही नहीं, मिटायेंगे कैसे? अंधेरे के साथ कुछ भी नहीं किया जा सकता है। अंधेरे के साथ कुछ करना हो तो रोशनी के साथ कुछ करना पड़ता है। बड़ी उल्टी स्थिति मालूम पड़ती है। अगर अंधेरे को मिटाना है तो दिये को जलाओ। अगर अंधेरे को लाना है तो दिये को बुझाओ। अंधेरे के साथ सीधा कुछ किया ही नहीं जा सकता। नहीं तो आप किसी से दुश्मनी हो जाय तो सब मित्र मिलकर उसके घर में अंधेरा डाल आयें। यह नहीं हो सकता है। अंधेरा नहीं डाल सकते हैं किसी के घर में। और यहां अंधेरा हो जाय, तो हम सारे लोग ताकत लगायें तो भी अंधेरा इस पन्डाल के बाहर निकाल नहीं सकते हैं। और उससे एक भ्रम भी पैदा हो सकता है—देखें तर्क कैसे भ्रम पैदा कर देता है। उससे यह भी भ्रम पैदा हो सकता है कि अंधेरा बहुत ताकतवर है। हम इतने लोग ताकत लगा रहे हैं और नहीं निकलता। ठीक भी लगता है तर्क की भाषा में। अंधेरा ताकतवर है, क्योंकि हम इतनी ताकत लगा रहे हैं, फिर भी नहीं निकलता। लेकिन अंधेरा ताकतवर नहीं है। असल में अंधेरा है ही नहीं। इसलिये कितनी ही ताकत लगावें वो नहीं निकलेगा। जो नहीं है, उसे निकाला नहीं जा सकता है। अभाव को मिटाना असम्भव है। जो है उसे निकाला भी जा सकता है। जो नहीं है उसे कैसे निकालियेगा?

अहंकार को इसलिये जो लोग निकालने में लग जाते हैं—सुनकर, समझकर कि अहंकार बाधा है, तो फिर अहंकार को मिटाकर ही रहेंगे। और जब वे कहते हैं कि 'मिटाकर ही रहेंगे' तब भी अहंकार पीछे हँसता है और वह कहता है कि ठीक है, मिटाओ। अब हम इसी में मजा लेंगे। अब हम इसी से मजबूत हो जायेंगे कि मिटाने में लगे हैं। अब हम मिटा कर रहेंगे।

एक सम्राट को खबर मिली है कि उसका एक मित्र, एक फकीर, गाँव में आ रहा है, राजधानी में। उसने सुना। साथ पढ़े थे वे दोनों। सोचा कि नग्न फकीर है, दूर तक उसकी ख्याति है, उसका स्वागत करें। उसने सारे द्वारों को फूलों से सजा दिया, दीवाली मनवा दी। फकीर आ रहा था, नग्न। रास्ते में यात्रियों ने उसे खबर दी कि कुछ पता है, वो जो तुम्हारा मित्र है, बचपन का, वह सम्राट, वह तुम्हें हतप्रभ करना चाहता है। वह तुम्हें दिखाना चाहता है कि तुम क्या हो, एक नंगे फकीर ही ना, और एक हम है कि रास्ते पर इत्र भी छिड़कवा दिया है, लाखों रुपयों का। एक हम हैं कि दिये जलवा दिये हैं पूरे नगर में। एक हम हैं कि सारे नगर को सजा दिया है, स्वर्गपुरी सा। और तुम क्या हो? एक नंगे फकीर ही ना। वह इतनी रौनक सजा कर तुम्हें हत् प्रत् करना चाहता है। उस फकीर ने कहा, 'घबराओ मत। देख लेंगे।' नंगा फकीर था। कुछ पास न था। यात्रियों ने सोचा, कैसे देखेगा? क्योंकि देखने को, दिखाने को कुछ पास मालूम नहीं पड़ता है। कपड़े भी नहीं है। पैसा पास नहीं है। बिल्कुल नंगा फकीर है। पर वे यात्री गौर से अगर देखते, उसकी आंख में, तो वे पहचान लेते कि वह दिखा देगा। क्योंकि उसकी आंखों में वो अहंकार था।

दिन आ गया। स्वागत की तैयारी हो गयी। गांव के बाहर बड़ा द्वार बना सम्राट अपने मित्रों को लेकर वहां हाजिर है। फकीर आया। देखकर सम्राट हैरान हुआ। मित्र भी चकित हुए। घुटने तक उसके पैर कीचड़ से भरे हुये हैं। महंगी कालीन बिछाये गये हैं, महल तक, उसके रास्ते पर। वह उन बहुमूल्य, लाखों के कालीनों पर कीचड़ भरे पैरों से अकड़ कर चलने लगा सम्राट ने रास्ते में कुछ न कहा। महल में पहुंचकर उसने कहा कि प्रतीत होता है, रास्ते में कोई तकलीफ हुई। लेकिन रास्ते सूखे पड़े हैं। पानी का पता नहीं है। वर्षा का मौसम नहीं है। पैर इतने कीचड़ में कैसे हो गये होंगे। गड्ढा था कोई? गिर गये आप? चोट लगी? उसने कहा, न कोई गड्ढा था, न चोट लगी। लेकिन तुम क्या समझते हो अपने को? अगर ईरानी कालीन बिछाकर अपनी शान बताना चाहते हो, तो हम भी फकीर हैं। हम कीचड़ भरे पैरों से चलकर दिखा सकते हैं।

उस सम्राट ने फकीर को गले लगा लिया और उसने कहा कि मैं तो समझता था कि तुम बदल गये होओगे। लेकिन कुछ भी बदला नहीं है। हम सब वहीं हैं जहां थे। मैं तो बड़ा सोचता था कि तुम बदल गये होओगे। मैं तो मन में बड़ा दीन-हीन हो रहा था कि हम हैं अहंकारी, कहां ये विनम्र साधु। हम तो सोचते थे कहां अहंकार की दुर्गन्ध और कहां तुम्हारे जीवन की सुगंध। लेकिन नहीं, आओ गले मिल लें। कुछ बदला नहीं है। सब वही है। कोई फर्क नहीं पड़ा है। और मैं आप से कहना चाहता हूं कि ये सम्राट उस फकीर से ज्यादा विनम्र था कि उसने कहा कि हम अहंकारी हैं। ......उसे यह दीख गया कि मैं अहंकारी हू, यह बहुत मूल्यवान है।

इसलिये मैं यह नहीं कहता हूं कि आप मिटाने को निकल जायं अहंकार को। मिटाने मत निकलना, अन्यथा वह नहीं मिटेगा। अहंकार को समझने निकलना पड़ेगा, मिटाने नहीं। और जो समझ लेता है, उसका मिट जाता है। मिटाना नहीं पड़ता है। क्योंकि जैसे ही हम समझते हैं, हम पाते हैं कि 'अहंकार कोई चीज नहीं है, कोई static entity नहीं है। जैसे एक आदमी सायकिल चला रहा है। अब सायकिल को अगर चलाना है तो पूरे समय पायडिल चलाना पड़ता है। आपका पायडिल रुका और उधर थोड़ी देर में सायकिल भी रुकी। ऐसा नहीं है कि आप घंटे भर सायकिल चला चुके हों तो घंटे भर आराम कर लें। सायकिल चलती है, चलाते रहने से अनवरत। सायकिल का चलाना अनवरत क्रिया है। अहंकार का पैदा होना अनवरत क्रिया है। अहंकार को २४ घंटे पैदा करना पड़ता है, तब वह रहता है। और अगर आप को समझ में आ जाय कि मैं इस इस तरह पैदा कर रहा हूं, इस इस तरह पैदा कर रहा हूं और आपका पायडिल रुक गया। वह (अहंकार) बिदा हो जाता है। वह कोई entity नहीं है। वह कोई चीज नहीं है। अहंकार कोई वस्तु नहीं है, प्रक्रिया है, process है। कोई पदार्थ नहीं है, कि कहीं रखा है कि लठ्ठ लेकर उसके पीछे पड़ जायं, उसको मिटा डालें। वह कोई पदार्थ नहीं है। वह एक प्रक्रिया है, जो २४ घंटे पैदा हो रही है। अहंकार जीने का एक ढ़ंग है और प्रेम भी जीने का एक ढ़ग है। न तो प्रेम कहीं रखा है कि हम जायें और भर लायें और तिजोरियां भर लें और न अहंकार कहीं रखा है कि आग लगा दें और मिटा दें। अहंकार जीने का एक ढ़ंग है। २४ घंटे उसे हमें पैदा करना पड़ता है। और प्रेम भी जीने का एक ढ़ग है। २४ घंटे हमें उसे भी सृजन करना पड़ता है।

तब मेरी बात का मतलब यह है कि अहंकार को जब कोई समझने जाता है तो वह देखता है कि जब वह रास्ते पर चल रहा है तब भी अहंकार पैदा कर रहा है। आपने कभी ख्याल किया है कि आप अपने बाथरूम में दूसरे आदमी होते हैं और बैठक खाने में दूसरे आदमी हो जाते हैं। अब बाथरूम से बैठकखाने तक आने में कहां वह घटना घटती है जब आप बदल जाते हैं? बाथरूम में आप बिल्कुल ही और आदमी होते हैं, बच्चे की तरह सरल। हो सकता है कभी आइने में मुंह भी बिचकाते हों। विनम्र आदमी भी बिचकाता है, लेकिन बाथरूम में। बाहर तो मुंह बिचकाते बच्चों को अकड़कर कहता है कि क्या कर रहे हो? क्या बचपना है? लेकिन बाथरूम से बैठकखाने तक आने में कौन सी जगह है जहां अहंकार पायडिल भर लेता है और अकड़कर बैठ जाता है, आकर बैठक-खाने में।

रास्ते पर आप जा रहे हैं। सुनसान रास्ता है। कोई नहीं है। आप दूसरे आदमी होते हैं। और फिर दो आदमी निकल आये, पास की गली से और आप फौरन बदल कर दूसरे आदमी हो जाते हैं। आपकी चाल बदल जाती है। आँख बदल जाती है, रूप बदल जाता है, ढ़ंग बदल जाता है। अभी आप निश्चिन्त चले जा रहे थे। अहंकार नहीं था। पायडिल नहीं लगा रहे थे आप। क्योंकि जब कोई मौजूद नहीं था तब पायडिल लगाने की जरूरत क्या थी? आप अकेले थे तो किसको अहंकार दिखाना है? लेकिन दो आदमी निकल आये, आप बदल गये। आप और हो गये। इसको पहचानना पड़ेगा।

अहंकार को २४ घंटे पहचानना पड़ेगा। कहां--कहां हम उसे पैदा कर रहे हैं? कैसे-कैसे उसे पैदा करते हैं? और अगर यह पहचान में आ जाय तो फिर आप सड़क पर चलेंगे और पहचान पायेंगे कि ठीक इस क्षण में सब बदल गया। वे दो आदमी आये और सब गड़बड़ हो गया। यहां कुछ और तरह का आदमी आ गया है। मैं कुछ और हो गया।

आप जब अपने मालिक के सामने होते हैं तब आपने देखा, आप और होते हैं और अगर नौकर के सामने होते हैं तब और होते हैं। यानी यहां तक हालत हो सकती है कि इस तरफ मालिक खड़ा है और उस तरफ नौकर खड़ा है। तब आपकी ये आंख और होती है और वो आंख और होती है। इधर मालिक खड़ा है, तो ये आंख पूंछ तक हिलाती रहती है। उधर नौकर खड़ा है तो ये आंख दबाती रहती है, धमकाती रहती है।

आदमी अहंकार को २४ घंटे पैदा कर रहा है। उसे पहचानना पड़ेगा। उसकी खोज करनी पड़ेगी। उसका पीछा करना पड़ेगा कि कहां कहां पैदा होता है। और कुछ नहीं करना है। सिर्फ इसकी खोज करनी है कि वह कहां कहां पैदा होता है। एक एक Gesture एक एक इशारे में वह पैदा हो जाता है। जरूरी नहीं है कि Gesture, इशारा, जब हम हाथ जोड़कर खड़े हों तो उसमें पैदा न हो जाय। मंदिर में आदमी जब अकेला हाथ जोड़कर खड़ा होता है तब भी थोड़ी बची हुई आंखों से दोनों तरफ देख लेता है कि कोई देख रहा है कि नहीं। क्योंकि ४ लोग देख लें और गांव में खबर कर दें कि यह आदमी धार्मिक है। नहीं तो बेकार मेहनत चली जाती है।

टाल्स्टाय ने अपना एक संस्मरण लिखा है। लिखा है कि एक दिन सुबह पांच बजे, अंधेरे में मैं चर्च पहुंच गया। अंधेरा था। कोई दिखायी नहीं पड़ता था। लेकिन आवाज सुनाई पड़ती थी। मैं जरा भीतर चला गया। भीतर गया, तो देखा कि गांव का जो सबसे बड़ा धनपति है, वह हाथ जोड़कर भगवान से कह रहा है कि मैंने बड़े पाप किये हैं, मुझे माफ कर। मैंने बड़े अन्याय किये हैं, मुझे माफ कर। मैं महापापी हूं, हे पिता! मुझे क्षमा कर। टाल्स्टाय और पास खिसक गये, क्योंकि उस आदमी की तो बड़ी ख्याति थी कि चरित्रवान है। और वह आदमी खुद कह रहा है कि मैं महा पापी हूं। वह और पास सरक गया देखने कि वही है न आदमी? देखा पास जाकर कि वही है। उस आदमी ने भी चौंककर पीछे देखा। उसने कहा, 'कौन हैं?' टाल्स्यटाय ने कहा, 'मैं टाल्स्टाय हूं। पर आश्चर्य! मैं तो सोचता था कि आप बड़े चरित्रवान हैं।' उसने कहा कि मैं हूं। कौन कहता है कि मैं चरित्रवान नहीं हूं? 'लेकिन अभी तो आप कह रहे थे कि मैं महा पापी हूं।' तो उसने कहा कि वो तो मैं परमात्मा से कह रहा था, तुमसे नहीं। और ध्यान रहे, अगर बाजार में जाकर किसी से कहा तो मान-हानि का मुकदमा चलवा दूंगा।' पर, टाल्स्टाय ने कहा कि अभी तो आप कहते थे कि मैंने बड़ा पाप किया है। उसने कहा, 'कहता था। लेकिन तुम्हें नहीं। वह हमारे और भगवान के बीच की बात है। वह किसी और की बात नहीं है। और ध्यान रहे, किसी को कहना मत बस्ती में जाकर। टाल्स्टाय ने कहा, 'लेकिन कैसा मजा है, आप दोनों तरह की बातें करते हैं। भगवान से एक तरह की और हमसे दूसरे तरह की।' टाल्स्टाय ने लिखा है कि मैं समझ नहीं पाया कि क्या बात है? बात तो साफ है। टाल्स्टाय के मौजूद होते ही अहंकार खड़ा हो गया। पायडिल मार दी गयी। यह एक आदमी खड़ा हुआ सुन रहा है। यह बाजार में जाकर खबर कर देगा लोगों को कि यह आदमी अपने मुंह से ही कह रहा था कि मैं पापी हूं। भगवान से बात चल रही थी। क्योंकि वह पापी जब कह रहा है भगवान तो वह भी जानता है कि कहां का भगवान? कैसा भगवान? सब बातचीत है सचाई कुछ भी नहीं है।

अगर भगवान भी मिल जाय उसको, सामने खड़ा हो जाय, निकल आये चर्च से बाहर कि ठीक, समझ लिया तो उससे भी कहेगा कि ध्यान रखना, यह बात

प्राइव्हेट थी। पब्लिक बात नहीं है। इसे किसी और से मत कह देना। नहीं तो मान-हानि का मुकदमा चला दूंगा। ये तो प्राइव्हेट बात थी। ये तो आपस में कर रहे थे। ये तो कुछ कहने की बात नहीं है। वो तो भगवान है जो कुछ कहता नहीं है, इसलिये कोई झंझट नहीं है। आप सब मजे से कहते रहते हैं कि मैंने ये पाप किया, वो पाप किया। और यह कहकर भी अपने अहंकार को मजबूत करते रहते हैं कि देखो मैं कितना सरल आदमी हूं। मैं सब पापों को स्वीकार कर लेता हूं।

अभी तो मनोवैज्ञानिकों ने एक खोज की है जो बहुत हैरान करने वाली है। रूसो ने एक आत्म कथा लिखी है। उसके पहले सेंट अगस्तीन ने Confession के नाम से अपनी आत्म-कथा लिखी है। गांधी जी ने अपनी आत्म-कथा लिखी है। इधर कोई २-३ सौ वर्षों में कुछ लोगों ने ऐसी आत्म-कथाएँ लिखी हैं जिसमें उन्होंने अपने पापों, अपनी गलतियों, अपनी बुराइयों का जिक्र किया है अब ये मनोवैज्ञानिक इस नतीजे पर पहुंच रहे हैं कि वे कई पाप झूठ हैं, जिन्हें उन्होंने किये नहीं हैं, सिर्फ लिखे हैं। बड़ी हैरानी की बात है कि कोई आदमी पाप भी झूठ लिखेगा। जिसे किये ही नहीं हैं। तो मनोवैज्ञानिक कहते हैं, उसमें भी कारण हैं। वह आदमी दिखलाना चाहता है, देखो, मैं कैसा महात्मा हूं अपने पाप भी बताये दे रहा हूं। अपने पाप भी बताये दे रहा है, जो उसने कभी नहीं किये हैं। वो भी जना (बता) रहा है कि मैं कोई साधारण आदमी नहीं हूं। इतना अद्‌भुत है आदमी का अहंकार।

वह ऐसे सूक्ष्मतम रास्ते खोजता है। इसको पहचानना पड़ेगा। इसकी खोज करनी पड़गी। अहंकार की एकदम से हत्या नहीं की जा सकती। वह कहीं है नहीं कि आप तलवार लेकर चले जायें और मार डालें वह एक प्रक्रिया है, जिसे हम २४ घंटे पैदा कर रहे हैं। उसे हमें देखना पड़ेगा। देखना पड़ेगा, खोजना पड़ेगा— उठते, बैठते, बातें करते। जंगल में जाने से नहीं मिटेगा अहंकार। जंगल में जाने से इसीलिये लोग अक्सर समझते हैं कि अहंकार-वहंकार सब खतम हो गया है। वह मरा हुआ हो गया है। अहंकार तो मरेगा भीड़ में खड़े होने से, अन्तर्सम्बन्धों में, Relationships में। जब आप पत्नी से बात कर रहे हैं तब, जब मित्र से बात कर रहे हैं तब, जब दुकान में बैठकर ग्राहक से बातें कर कर रहे हैं तब। जब चल रहे हैं, खाना खा रहे हैं, उठ रहे हैं तब। जिन्दगी में मिलेगा अहंकार, एकान्त में नहीं मिलेगा। एकान्त में इसलिये नहीं मिलेगा क्योंकि वह पैदा ही दूसरे के साथ होता है। दूसरे के साथ हमारा जो संघर्ष चल रहा है, उसमें ही वह पैदा होता है। नहीं तो वह पैदा ही नहीं होता है। उसे खोजना होगा तो जिंदगी में ही खोजना पड़ेगा।

एक सन्यासी हिमालय में रहा, ३० वर्षों तक। शान्त हो गया। हिमालय पर शांत हो जाता है आदमी। उसमें आदमी की कोई खूबी नहीं है। हिमालय की वजह से शांत हो गया। उसने कहा, मैं तो बिल्कुल शांत हो गया। अब तो कोई क्रोध नहीं उठता। क्रोध कैसे उठे? क्रोध उठाने वाले चाहिये। अब एक कुआं है। कोई बाल्टी लेकर पानी भरने नहीं आता तो कुआं सोच सकता है, अब अपने में पानी न रहा। लेकिन कोई बाल्टी लेकर आ जाये तो फौरन पता चल जायेगा कि पानी है। बाल्टी से पानी निकलना चाहिये तब पता चलता है। जब एक आदमी मुझे गाली देता है, तब वह बाल्टी डाल रहा है मेरे कुएं में। और अगर क्रोध है तो बाहर निकल आयेगा। नहीं है, तो बाल्टी खाली आ जायेगी। जब बाल्टी खाली आये तब मुझे जानना चाहिये कि क्रोध नहीं है। लेकिन मैं चला गया जंगल में, वहां कोई बाल्टी डालने वाला नहीं है। अब बैठे हैं हम अकेले में और सोचते हैं कि क्रोध वगैरह सब बिदा हो गया है बिल्कुल। क्योंकि वहां कोई गाली देने वाला नहीं। स्त्री से भागकर ब्रह्मचारी हो जाना कितना आसान है। बहुत आसान है। उससे आसान कोई और बात हो सकती है! लेकिन वह ब्रह्मचर्य नहीं है, ब्रह्मचर्य का धोखा है deception है।

जिंदगी में कसौटी है। वह आदमी ३० साल था (हिमालय पर) और शाँत हो गया था। असल में अशान्त होने का कोई कारण ही न रहा था। विनम्र हो गया था क्योंकि अहंकारी होने की कोई वजह ही न रही थी। किससे कहे कि मैं हूं। वृक्षों से कहो तो वृक्ष हंसे। पौधों से कहो तो पौधे सुनें न। पक्षियों से कहो तो वे उड़े चले जायं। कहें किससे कि मैं हूं? कोई न था सुनने वाला, ठीक हो गया। फिर धीरे धीरे उसकी खबर पहुंच गयी नीचे गांव तक। लोग आने लगे। और लोगों ने उससे प्रार्थना की कि जल्दी ही एक मेला है। आप चलें। हजारों लोग वहां आपके दर्शन करेंगे। हमें आप केवल हां कह दें। अक्सर लोग महात्माओं को वहाँ खींच लाते हैं जहाँ वे होते हैं। क्योंकि वे कहते हैं जरा आसानी रहेगी। महात्मा जहाँ होते हैं वे वहाँ नहीं जाते। उतनी चढ़ाई कौन करे? कहते हैं, आप ही नीचे आ जाईये थोड़ा सा हमारे पास तो ठीक रहेगा। और जिन्हें पूजा करवानी हो तो धीरे धीरे वे वहीं आकर खड़े हो जाते हैं। ठीक है। पर हम नहीं जाते हैं।

महात्मा ने कहा, ठीक है। अब डर भी क्या?। अब तो मैं शांत भी हो गया, आनंदित भी हो गया, अहंकार भी न रहा, अब चल सकता हूं। उसे उतार ले आये भक्तगण नीचे। लेकिन यहां तो बड़ी भीड़ थी। लाखों लोगों का मेला था। लोग न कुछ जानते, न पहचानते। बड़ा भीड़ भड़क्का था। महात्मा जब भीड़ में गये भीतर तो एक आदमी का जूता उसके पैर पर पड़ गया। ३० साल का महात्मा कहां बिदा हो गया है एक सैकेण्ड में पता न चला। उसे पकड़कर उसकी गरदन पकड़ ली और कहा कि अंधे, दिखायी नहीं पड़ता है? जानता नहीं मैं कौन हूं? तब उसे ख्याल आया कि उस ३० साल का क्या हुआ? पायडिल लग गया वापिस। वो ३० साल बिदा हो गये। वे नहीं रहे वहां खतम हो गये, वे अब नहीं रहे। तो ३०साल से कुछ फायदा नहीं हुआ। सिर्फ सायकिल पर बैठे थे, पायडिल नहीं चला रहे थे। सायकिल भी मौजूद थी, पायडिल भी मौजूद था, हम भी मौजूद थे। सब मौजूद था। सिर्फ पायडिल नहीं चला रहा था। क्योंकि किसके लिये चलायें, कोई था नहीं। एक आदमी ने जूता मार दिया पैर पर, चला गया पायडिल में हो गयी घटना। तब उसे ख्याल आया कि आश्चर्य! वे ३० साल कहां गये? वो कहां गयी शांति जो जंगल में थी? वो कहाँ गयी विनम्रता जो पहाड़ पर थी? वो सब खो गयी। वह वापिस लौट गया। उसके भक्तों ने कहा, 'कहां जा रहे हो?' उसने कहाकि अब मैं जा रहा हूं और घनी भीड़ में। पहाड़ पर नहीं चढ़ रहे हैं? पूछा गया। तो उसने कहा, 'नहीं, अब मैं जा रहा हूं। ३० साल हिमालय जो न बता पाया वह एक मनुष्य के सम्पर्क से पता चल गया। अब मैं और भीड़ में जा रहा हूं। अब मैं दुनिया में जा रहा हूं। अब मैं वहीं देखूंगा कि क्या हो सकता है।

अहंकार को पहचानना पड़ेगा जिंदगी की सारी व्यवस्था में। और बड़े मजे की बात यह है कि जहां जहां आप पहचान लेंगे वहीं वहीं अहंकार असंभव हो जायेगा। पहचान के कोई अहंकारी नहीं हो सकता। जहां पहचान आया वहीं असंभव हो जायेगा। क्योंकि अहंकार अकड़ तो दूसरे को दिखाता है, लेकिन दुख खुद को दे जाता है। अहंकार चमक तो दूसरे को दिखाता है लेकिन छाती अपनी चढ़ा जाता है। अहंकार ऊपर तो रोब बताता है लेकिन भीतर पीड़ा से भर जाता है। अहंकार फोड़े की तरह है। ऊपर तो उठ आता है, दिखाई पड़ने लगता है, भीतर मवाद भी पड़ जाती है। लेकिन पता चल जाय कि ऐसे ऐसे मैं अहंकार पैदा कर रहा हूं, इस इस ढंग से तो वो ढंग बिदा हो जायेंगे। जिस दिन अहंकार सब रास्तों से पहचान लिया जाता है, उस दिन आदमी अहंकार से खाली हो जाता है। जिस दिन आदमी अहंकार से खाली है, उस दिन पत्थर हट जाता है और प्रेम के झरने फूट पड़ते हैं फिर प्रेम की यात्रा शुरू हो जाती है। फिर वह यात्रा नहीं रुकती, नहीं रुकती, वहां तक जहां तक सागर न आ जाय। छोटी सी नदी भी जब चलती है तो सागर तक पहुंच जाती है। फिर रुकती ही नहीं है। कितनी भटके, कितनी ही परेशानियां, गड्ढे और पहाड़ मिलें, बह जाती है, जाती है और पहुंच जाती

है। सब नदियां सागर तक पहुंच जाती हैं। छोटी छोटी बूंद भी रास्ता बना लेती हैं, सागर तक पहुंचने का और पहुंच जाती हैं। लेकिन एक बार पत्थर हट जाये आदमी का, तो आदमी और परमात्मा के बीच कोई रुकावट नहीं है, सिवाय आदमी के अपने अहंकार के।

अहंकार जहां नहीं है वहां प्रभु उपस्थित हो जाता है। अब मैं आपसे कैसे कहूं कि अहंकार को मिटाय। नहीं मिटाने के लिये नहीं कह सकता हूं। अहंकार को जानें, पहचानें, खोजें, आमना-सामना कर लें। और आप पायेंगे कि अहंकार नहीं रह गया है।

जहां नहीं है अहंकार, वहां प्रभु है। मैं ब्रह्म हूं, ऐसा नहीं, जहां मैं नहीं हूं, वहीं ब्रह्म है।

इन तीन दिनों में ये थोड़ी सी बातें कहीं। इस सम्बन्ध में जो भी प्रश्न है, कल दिन उसकी चर्चा करूंगा। और जिन्हें इस 'मैं नहीं हूं' के भाव को अनुभव करना है, वे सुबह के ध्यान में साढ़े आठ बजे उपस्थित रहें। मेरी बातों को इतने प्रेम और शान्ति से सुना उससे अनुगृहीत हूं। और अन्त में सबके भीतर बैठे परमात्मा को प्रणाम करता हूं, मेरे प्रणाम स्वीकार करें।

●●●

मन की जीत

(आचार्य श्री की पत्र प्रेरणा से)

मन को देखो।
उसकी आंधियों को भी और उसकी शांतियों को भी।
करो कुछ भी मत—बस देखो।
साक्षी बनो।
बुरे भले का निर्णय भी मत लो।
निर्णय ही मत लो——बस देखो।
और फिर मन ऐसे ही खो जाता है—अपने सब दुखों और सब सुखों के साथ—— जैसे सुबह सूरज के ऊगने पर अंधेरा खो जाता है।
लेकिन, मन से लड़ना मत।
क्योंकि, वह उससे हारने की रामबाण विधि है!
जीतना हो तो लड़ना ही मत।

***

परमात्मा की साधना – अनाम

संकलन : (श्री सरदारीलाल सहगल, अमृतसर)

धर्म के संबंध में थोड़ी सी बातें मुझे कहने को कहा गया है। लेकिन सबसे बड़ी कठिनाई तो यह है कि धर्म के संबंध में कुछ भी कहना संभव नहीं। धर्म को जाना तो जा सकता है कहा नहीं जा सकता। इसलिए बहुत विरोधाभाषी बात आप से कहना चाहूंगा सबसे पहले, और वो यह कि जो भी कहा जा सकता है वह धर्म नहीं हो सकता, और जो धर्म है वो कहा नहीं जा सकता है।

जीवन में जितनी गहरी अनुभूतियां हैं, वह कोई भी कही नहीं जा सकतीं। जीवन में जो बहुत छुद्र है उस संबंध में हम कुछ बातचीत कर पाते हैं। जो वृहद है वह बातचीत से बाहर छूट जाता है। रवीन्द्र नाथ मर रहे थे, मृत्यु की शैय्या पर थे। उन्होंने अपने जीवन में ६००० गीत लिखे और समझा जाता है कि दुनिया में किसी और कवि ने इतने अद्‌भुत और इतने ज्यादा गीत कभी नहीं लिखे। अंग्रेजी में भी शैली को महाकवि कहा जाता है, उसने भी केवल दो हजार गीत ही लिखे हैं। रवीन्द्र नाथ के छः हजार गीत हैं। एक व्यक्ति उनसे मिलने आया था और उसने रवीन्द्र नाथ से कहा आप तो जो भी जीवन में पाना था पा लिये, जो कहना था कह लिये, जो गाना था गा लिये, अब तो बड़ी शान्ति से बिदा ले सकते हैं, तो रवीन्द्र नाथ रोने लगे। रवीन्द्र-नाथ ने कहा कि गलत कह रहे हैं। जो मुझे कहना था अभी कहां कह पाया, जो मुझे गाना था, अभी कहां गा पाया, अभी तो केवल साज बैठा पाया था कि जाने का समय आ गया। जो कहना था वो भीतर ही रह गया। और परमात्मा से इधर मैं रोज कह रहा हूं कि यह क्या मजाक है? अब जबकि मैं कुछ कहने की चेष्टा करने में सफल हो रहा था कि बिदा होना पड़ रहा है। तो उस आदमी ने पूछा कि आपने जो इतना गाया, इतने गीत लिखे? रवीन्द्र नाथ ने कहा गाने से पहले सोचता था कि कुछ कह पाऊँगा। गाने के बाद पता चला कि शब्द बाहर रह गये हैं लेकिन अर्थ भीतर रह गया। और जो मैं कहना चाहता था वो मेरे हृदय में ही रह गया है। करीब करीब जिन्होंने भी सत्य को, सौन्दर्य को परमात्मा को जाना, उन सबकी सबसे बड़ी कठिनाई यही है कि उसे कहना उनके लिये असंभव है। आदमी के पास जो भाषा है जो बहुत कमजोर है और आदमी की भाषा बाजार के काम तो आ जाती है, काम चलाऊ जिन्दगी के काम आ जाती है, लेकिन जैसे ही किसी गहरे स्त्रोत को छूने की कोशिश की जाए, वैसे ही यह कठिन हो जाती है। अगर हम किसी से प्रेम करते हों, तो प्रेम के क्षण में बोलना बंद हो जाता है। प्रेमी ने कितना हो सोचा हो कि यह कहूंगा, वह कहूंगा जब वो प्रेमी के पास पहुंचे, प्रेयसी के पास पहुंचे, मित्र के पास पहुंचे, उसके पास पहुंचे जिससे उसने प्रेम किया हो, तो वहां जाकर वो मौन हो जाता है। शब्द काम नहीं पड़ते, चुप रह जाना पड़ता है। यह बड़े आश्चर्य की बात है कि इस जगत में जो भी महत्वपूर्ण बातें हैं, वो चुप रह करके कहीं गई, बोल कर नहीं कही गईं। साधारणतया प्रेम में भी चुप रहना पड़ता है, क्योंकि प्रेम का अनुभव इतना गहरा है कि शब्दों में डालना कठिन हो जाता है। तो परमात्मा का अनुभव तो बहुत गहरा है। उसे शब्दों में डालने का तो कोई उपाय ही नहीं है।

चीन में एक बहुत अद्भुत संत हुआ है, लाओत्से अस्सी वर्ष का हो गया था, तब तक उसने कुछ लिखा नहीं था। लोग कहते थे कि अपना अनुभव लिख जाओ, तो लाओत्से हंस करके टाल देता और कहता था कि अभी मेरी तैयारी पूरी नहीं हुई। फिर तो उसके अंतिम क्षण आ गए और लोगों ने कहा, अब तो लिखकर छोड़ ही जाओ कहीं तुम्हारा अनुभव खो न जाए, तो लाओत्से ने कहा—कि कैसे कहूं? जिन्दगी भर कोशिश की, जब भी कहने की कोशिश करता हूं, जो कहना चाहता हूं वह पीछे ही छूट जाता है और जो बिल्कुल नहीं कहना चाहता, वह शब्दों से निकल जाता है। लेकिन लोग नहीं माने तो उसने एक किताब लिखी। उस किताब का नाम है, ताऊतेतिंग। उस किताब में पहली बात ही उसने यह लिखी कि सबसे पहले मैं यह निवेदन कर दूं कि जो भी मैं कहूंगा उसे पकड़ कर मत बैठ जाना, क्योंकि जो मैं कहना चाहता हूं, मैं कह नहीं पाऊंगा। उसने पहली ही भूमिका में यह बात कही कि जैसे मैं चांद को ऊंगली से बताऊं और कोई मेरी ऊंगली पकड़ ले और समझे कि यही चांद है। ऐसी ही भूल शब्दों के साथ हो जाती है। शब्द इशारा कर सकते हैं, सत्य को कह नहीं पाते। लेकिन हम शब्दों को पकड़ लेते हैं। जैसे, मैं ऊंगली दिखाऊं तो कोई मेरी ऊंगली को पकड़ ले और समझे यही चांद है। ऊंगली चांद नहीं और जहां चांद है, वहां ऊंगली का कोई संबंध नहीं और अगर चांद को देखना है तो ऊंगली को भूल जाना पड़ेगा, लेकिन ऊंगलियां पकड़ ली जाती हैं। हिन्दु है, मुसलमान है, सिख है, ईसाई है। वे सब चांद को छोड़कर ऊंगली पकड़े हुए लोगों के नाम हैं। किसी ने नानक की ऊंगली पकड़ ली तो वह सिख है, किसी ने कृष्ण की ऊंगली पकड़ ली तो वह हिन्दू है और किसी ने क्राइस्ट (Christ) की ऊंगली पकड़ ली तो वह ईसाई है, लेकिन चांद तो एक है। ऊंगलियां बहुत हो सकती हैं। चाहे नानक की ऊंगली हो, चाहे क्राइस्ट की, चाहे कृष्ण की और चाहे बुद्ध की और चाहे महावीर की। ऊंगलियां हजार हो सकती हैं, लाख हो सकती हैं, लेकिन चाँद तो एक है। धर्म एक है। लेकिन धर्म एक दिखाई नहीं पड़ता, बहुत धर्म दिखायी पड़ते हैं। इसलिए मैं कहता हूं, ऊंगलियां पकड़ लीं तो बहुत धर्म हैं अगर चांद देखा जाए तो एक ही धर्म रह जाएगा। बहुत धर्म नहीं रह जाएंगे। सत्य बहुत हो भी नहीं सकते, असत्य बहुत हो सकते हैं। अगर मैं असत्य बोलूं तो बहुत विकल्प हैं अगर मैं सत्य बोलूं तो कोई विकल्प नहीं है। सत्य एक ही हो सकता है, असत्य बहुत हो सकते हैं और धर्म तो परम सत्य है। वो जो अलटीमेट ट्रथ है धर्म का, उससे संबंध है। इसलिए बहुत धर्म नहीं हो सकते।

धर्म के संबंध में पहली बात तो मैं यह कहना चाहूंगा, धर्म के संबंध में कुछ भी कहा नहीं जा सकता। इशारे किये जा सकते हैं और खतरा यह है कि इशारे पकड़ न लिये जाएं। अन्यथा भूल हो जाती है। इशारे छोड़ने ही योग्य हैं। इसलिये जिस आदमी को धर्म तक जाना हो, उसे शास्त्र छोड़ने पड़ते हैं, क्योंकि शास्त्र इशारे हैं और जिसे धर्म तक जाना हो, उसे गुरू छोड़ने पड़ते हैं, क्योंकि गुरू इशारे हैं और जिसे धर्म तक जाना हो, उसे सम्प्रदाय छोड़ने पड़ते हैं, क्योंकि सब सम्प्रदाय इशारे हैं। धर्म तक जिसे जाना हो, उसे सब इशारे छोड़ देने पड़ते हैं और आंख वहां उठानी पड़ती है जहां चाँद है। वहां कोई इशारा नहीं। तो पहली बात तो यह ठीक से समझ लेनी जरूरी है कि आदमी इशारों को पकड़े हुए है और इशारों ने बहुत ही उपद्रव पैदा कर दिये हैं। इशारों की वजह से ही लड़ रहे हैं और जितना हम लड़ते हैं, उतना ही जीवन में धर्म का आना मुश्किल हो जाता है। लड़ने वाले चित्त में धर्म का आगमन नहीं हो सकता। धर्म तो उस चित्त में उतरता है, परमात्मा तो उस द्वार पर आता है जहां चित्त शुद्ध होता है, जहां सन्नाटा होता है, जहां शान्ति है। लेकिन हिन्दू के घर में शान्ति नहीं हो सकती। मुसलमान के दरवाजे पर शान्ति नहीं हो सकती, वहां झगड़ा जारी रहेगा। अभी मैं अहमदाबाद में था, मुझसे पहले खान अब्दुल गफ्फार खां वहां थे। वहां दंगा हो गया था तो खान अब्दुल गफ्फार खां ने लोगों को समझाया, मुसलमानों को कहा कि तुम्हें

सत्य में मुसलमान होना चाहिए और हिन्दुओं को कहा कि तुम्हें सच्चे हिन्दू होना चाहिए। उसके पीछे जयप्रकाश ने कहा लोगों से, कि मैं हिन्दू हूं और मुझे हिन्दू होने का गर्व है। फिर मैं वहां गया तो मुझे वहां बहुत ही हैरानी की बातें मालूम पड़ीं। मैंने लोगों से कहा, कच्चे मुसलमान बड़ी मुसीबत में डाल देते हैं और कच्चे हिन्दू भी बड़ी मुसीबत डाल देते हैं और सच्चे और पक्के हिन्दू और मुसलमान हो जायें तो मुसीबत हजार गुनी बढ़ जाती है, कम होने वाली नहीं। नहीं सवाल मुसलमान के पक्का होने का नहीं, सवाल हिन्दू के पक्का होने का नहीं, सवाल हिन्दू के मिट जाने का है, मुसलमान के मिट जाने का है। पीछे हिन्दू और मुसलमान के नाम मिटाने के बाद जो बाकी आदमी बचेगा, वो धार्मिक आदमी हो सकता है। पक्का हिन्दू, पक्का मुसलमान, नहीं यह पक्का खुद मिट जाना चाहिए। और भीतर जो आदमी है सीधा और साफ, जिसके ऊपर कोई लेबल नहीं, जो हिन्दू और मुसलमान में बंटा हुआ नहीं, वो आदमी धार्मिक हो सकता है अगर परमात्मा से किसी को मिलने जाना हो तो हिन्दू की हैसियत से वहां कोई नहीं जा सकता। वहां मुसलमान की हैसियत से कोई नहीं जा सकता। क्योंकि मैंने कहा कि यह इशारे हैं और जो इशारों को पकड़ लेगा, वह चांद तक नहीं जा सकता। लेकिन हममें कोई भूल चलती है, बड़ी भ्रान्ति चलती है, और हमारी सारी कोशिश जिन्दगी में यह होती है कि हम पक्के हिन्दू हो जायें, पक्के मुसलमान हो जायें, लेकिन पक्के हिन्दू और पक्के मुसलमान होने का कोई सवाल नहीं है। धार्मिक होने से हिन्दू मुसलमान होने का कोई संबंध नहीं! धार्मिक होना एक अलग ही डायमिनशन है, एक अलग ही आयाम है, एक अलग ही यात्रा है! इस यात्रा पर जब कोई निकलता है, तो सब मन्दिर, सब मस्जिद, सब गिरजे, सब गुरुद्वारे, सब उस एक ही के मन्दिर हो जाते हैं। लेकिन हमारी बड़ी तकलीफ है, हमारी बड़ी कठिनाई है कि जब भी दुनिया में ऐसे धर्म को कोई पाता है और जब वह हम से कहने आता है, तभी कुछ भूल हो जाती है। एक मुसलमान फकीर था फरीद, वो यात्रा पर निकला हुआ था। कबीर का आश्रम रास्ते में पड़ता था तो फरीद के साथियों ने कहा कि अच्छा होगा कि हम दो दिन कबीर के आश्रम में मेहमान हो जाएं। तुम दोनों की बातें होंगी और हम सब को बहुत आनन्द होगा। फरीद ने कहा, रूकेंगे जरूर, लेकिन बातें शायद ही हों और बात क्या होगी? कबीर को भी लोगों ने कहा कि उसके आश्रम से, कि फरीद इधर से निकलने वाला है। अच्छा हो, हम उसे रोक लें, मेहमान बना लें। दो दिन वो रुके, आप दोनों की बातें होंगी तो हमारे ऊपर अमृत की वर्षा हो जायेगी! कबीर बहुत हंसने लगे। उन्होंने कहा कि बातें शायद ही हों! लेकिन शिष्यों के समझ में न आया और फरीद को रोक लिया गया। फरीद दो दिन वहां रुका। फरीद और कबीर गले मिले, रोए भी, हंसे भी, साथ भी बैठे, दो दिन बीत गए। लेकिन बातें नहीं हुई। दो दिन में शिष्य घबरा गए। फरीद के शिष्य भी और कबीर के शिष्य भी। दो दिन में तो बहुत ऊब पैदा हो गई और दो दिन बाद जब बिदा किया तो जैसे ही फरीद और कबीर अलग हुए, कबीर के शिष्यों ने कबीर को पकड़ लिया और फरीद के साथियों ने फरीद को पकड़ लिया। पूछने लगे कि यह क्या किया, चुप क्यों रहे? कबीर ने कहा, परमात्मा के कहने का तो कोई उपाय नहीं है। अगर फरीद न जानता होता तो हम कह कर के भी समझाने की कोशिश करते। लेकिन वह भी जानता है इसलिये उससे कहने की कोई जरूरत नहीं। फरीद से कहा तो फरीद ने कहा कि जो बोलता है ना समझ होता है, क्योंकि उस दुनिया में बोलने का कोई उपाय नहीं। वहां तो केवल वही प्रवेश करते हैं, जो चुप हो जाते हैं। लेकिन फरीद के शिष्यों ने कहा कि आप हमसे तो बोलते हैं। फरीद ने कहा मजबूरी है मैं बोलता हूं इस आशा में बोलता हूं कि बोलना सुनकर, एक दिन तुम थक जाओगे। और सुनना भी छोड़ दोगे। बातचीत सुनते सुनते, शब्द सुनते सुनते, एक दिन मौन हो जाओ। इसलिये मैं बोलता हूं क्योंकि तुम समझ नहीं पाते। तुम शब्द ही नहीं समझ पाते, तो मौन कैसे समझ पाओगे, लेकिन कबीर जानते थे इसलिये मेरे बोलने का कोई अर्थ नहीं होता। आज तक इस पृथ्वी पर जिन्होंने भी जाना है, जो पाया है,

उसे नहीं कहा जा सकता, लेकिन इशारे उन्होंने बताने की कोशिश की है। उन्होंने कुछ इशारे किये हैं। उन इशारों से बड़ी गलती हो गई है। इशारों से हम वहां समझ सकते हैं, जो हम जानते हैं। अगर गीता पढ़ेंगे, तो आप नहीं समझ पायेंगे क्योंकि गीता में, वह नहीं है जो कृष्ण ने कहा है। वह है जो आप समझ सकते हैं। अगर आप नानक की वाणी पढ़ेंगे तो आप वह नहीं समझ पायेंगे, जो नानक ने कहा है, क्योंकि उसे समझने के लिए जो नानक ने कहा है, नानक की भाव दशा में होना जरूरी है। आप वही समझ पायेंगे, जो आप समझ सकते हैं। इसलिये तो इतना विवाद चलता है। गीता पर हजार टीकायें हैं, हजार आदमी इसमें हजार मतलब निकालते हैं कि गीता में यह मतलब है, यह मतलब है। वह विवाद भी करते हैं, कि तुम गलत हो और हमारा मतलब सही है। और अब कृष्ण का दिमाग खराब नहीं था कि उनकी एक ही बात में हजार मतलब हों। कृष्ण का दिमाग तो बहुत साफ था। उन्होंने जो कहा है, उसका मतलब एक ही हो सकता है और उसका पता कृष्ण को ही होगा। टीका करने वाले को, (Comm-entator) कोमनटेटर को, उसका कुछ पता नहीं। वह वो अपना मतलब डाल रहा है।

जब हम कोई किताब पढ़ते हैं, तो उसमें से शब्द उसके निकालते हैं और अर्थ अपना निकालते हैं। मीनिंग सदा हमारा होता है शब्द किताब के होते हैं। बुद्ध एक रात बोल रहे थे वो जब भी बोलते थे तो उनके भिक्षु, उनके सन्यासी, उनके साथ होते थे। वह उनसे कहते थे कि अब बात पूरी हो गई, अब तुम असली काम में लग जाओ। यह, रोज की बात थी बुद्ध के भिक्षु जानते थे कि असली काम क्या है? बुद्ध बोल चुकते तो असली काम का मतलब था कि अब प्रार्थना में, समाधि मेंलीन हो जाओ। उस रात एक चोर भी आया हुआ था, जब बुद्ध बोल चुके थे, तो उन्होंने कहा कि अब तुम रात के असली काम में लग जाओ। चोर ने कहा, बहुत रात हो गई मैं जाऊँ चोरी करने के लिए। उस रात एक वैश्या भी सुनने आई थी। जब बुद्ध ने कहा कि अब रात के असली काम में लग जाओ; भिक्षु समाधि के लिए चले गए, वैश्या अपनी दुकान खोलने चली गई। बुद्ध ने एक ही बात कही थी चोर ने अपना मतलब लिया, भिक्षु ने अपना मतलब लिया, वैश्या ने अपना मतलब लिया। आप भी वहाँ होते, मैं भी वहाँ होता, हम भी अपने मतलब लेते। मतलब सदा हमारे होते हैं। सारा उपद्रव पैदा हो गया है वो इसलिए पैदा हो गया है कि शास्त्र में शब्द हैं, अर्थ हम अपना डाल देते हैं, इसलिए शास्त्र से कोई कभी सत्य तक नहीं पहुंच पाता। शास्त्र पकड़ कर हम अपने ही आसपास घूमते रह जाते हैं। अगर सत्य तक किसी को जाना है तो उसे अपने अर्थ डालने की प्रक्रिया बंद कर देनी पड़ेगी। चीजें जैसी हैं उसे वैसा ही देखना पड़ेगा। कुछ अर्थ मत डालें। अगर हम एक क्षण भी जगत को पूरी आँख खोल कर देख लें और कोई अर्थ न डालें तो हम परमात्मा को अभी और यहाँ ही देख सकते हैं। पर उसे हम नहीं देख पाते, कोई आ रहा है तो मैं कहता हूं कि मेरी पत्नी आ रही है, मैंने अर्थ डाल दिया। मैं कहता हूं कि मेरा मित्र आ रहा है, मैंने अर्थ डाल दिया और मैं कहता हूं कि मेरा शत्रु आ रहा है, अर्थ डाल दिया। अगर हम हमारे चारों ओर जो हो रहा है, उसमें कोई अर्थ न डालें और जैसा है, जो है, उसको वैसा ही जान लें तो बड़े हैरानगी की घटना घट जाती है। जब कोई व्यक्ति अपनी तरफ से कोई अर्थ नहीं डालता, तब जो दिखाई पड़ता है, वह परमात्मा है। तब एक वृक्ष में भी परमात्मा दिखाई पड़ जायेगा। तब एक फूल में भी, सड़क के किनारे पड़े हुए एक पत्थर में भी। लेकिन हमें वह दिखाई नहीं पड़ता। हम अर्थ डालने के आदी हो गए हैं, इसलिए अगर हम परमात्मा को खोजने जाते हैं, तो हम मूर्ति बना देते हैं और अपना अर्थ डाल देते हैं कि यह रहा परमात्मा। मूर्ति क्या है इससे हमें मतलब नहीं हम अपना अर्थ डाल देते हैं कि यह रहा परमात्मा। वहाँ भी हम अपने ही अर्थ डालते रहते हैं वहाँ भी जो है हम उसे नहीं देखते।

मैंने सुना है जापान में एक फकीर हुआ है वह एक मन्दिर में ठहरा हुआ था। बुद्ध मन्दिर था। रात

सर्द थी और उसे बहुत सर्दी लग रही थी। वो उठकर अन्दर गया और उसने देखा भगवान बुद्ध की तीन मूर्तियाँ, लकड़ी की मूर्तियाँ रखी हैं। वह एक मूर्ति उठा लाया और आग जला कर तापने लगा। पुजारी को मन्दिर में आग जली हुई मालूम पड़ी। पुजारी भागा हुआ आया उसने पूछा—यह क्या कर रहे हो? मन्दिर में आग? वहाँ केवल आग ही नहीं वहाँ तो भगवान जल रहे थे तो वो पुजारी पागल हो गया। लेकिन वो मूर्ति तो राख हो चुकी थी, उस पुजारी ने कहा कि तुमने क्या किया? तुम आदमी पागल तो नहीं हो? तुमने भगवान की मूर्ति जला डाली, तो उस फकीर ने पास में पड़ी हुई लकड़ी को उठाकर उस राख को कुदेरा उस पुरोहित ने पूछा—यह क्या कर रहे हो? उसने कहा मैं भगवान की अस्थियाँ खोज रहा हूं तो उस पुजारी ने कहा कि तुम निपट पागल हो, लकड़ी की मूर्तियों में कहीं अस्थियाँ होती हैं? तो उस फकीर ने कहा कि रात बहुत सर्द है और दो मूर्तियां पीछे बाकी हैं तुम वह भी उठा लाओ उनको जला कर हम ताप लें। क्यों कि तुम खुद ही कहते हो कहीं लकड़ी की मूर्तियों में कहीं अस्थियां होती हैं? तो तुम जानते हो कि लकड़ी की मूर्तियां हैं और मानते हो कि भगवान हैं। जानते हो कि लकड़ी है मानते हो कि भगवान है। वो मानना तुम्हारा डाला हुआ है। पुजारी ने उस फकीर को मन्दिर से बाहर निकाल दिया। सुबह जब द्वार खोला तो वह फकीर जो रात भगवान की मूर्ति को जला कर ताप रहा था वह सामने मील का पत्थर लगा है वो मील के पत्थर पर दो फूल रखे हाथ जोड़े बैठा हुआ है। तब तो पुजारी ने कहा कि यह आदमी तो निश्चय ही पागल है। जा कर हिलाया और पूछा कि यह क्या कर रहे हो? भगवान की मूर्ति तो जला डाले और इस साधारण मील के पत्थर को हाथ जोड़े बैठे हो। तो उस फकीर ने कहा—कि मैं वही जांचने के लिए रात तुम्हारी मूर्ति में आग लगा दिया था कि भगवान तुम्हें दिखाई पड़ा है? और यही जांचने के लिए मैं अब भी पत्थर के सामने हाथ जोड़े बैठा हूं, तुम्हें भगवान दिखाई नहीं पड़ रहा है। अगर भगवान दिखेगा तो तभी, जब हम अपने मीनिंग जिन्दगी के ऊपर इम्पोज न करें अपने जीवन के ऊपर थोपें न। हमने सब अर्थ थोप दिये हैं हम जिन्दगी में वही देख रहे हैं जो हमें देखना है हम वही देख रहे हैं, जो है। नास्तिक देख लेता है कि भगवान नहीं है वो भी एक अर्थ थोप रहा है।...... आस्तिक देख लेता है कि भगवान है वो भी एक अर्थ थोप रहा है।

धार्मिक आदमी बिल्कुल तीसरी तरह का आदमी है जो कोई अर्थ नहीं थोपता। जो कहता है कि मैं अपनी तरफ से जिन्दगी में कुछ देखने न जाऊँगा। मैं खाली खड़ा हो जाऊँगा। जिन्दगी जैसे है उसे मैं वैसा ही जानूंगा। जो व्यक्ति जिन्दगी जैसी है उसको वैसा ही जानने के लिए तैयार है वो तत्काल धर्म के संबंध में जानने में समर्थ हो जाता है। लेकिन बहुत कठिन है, हमने इतने धोखे दिये हैं, हमने चीजों को जैसी हैं वैसा जानने से बदल दिया है। मैं देखता हूं कि एक आदमी मन्दिर में मूर्ति के सामने हाथ जोड़े खड़ा है वो कहता है कि मैं यह प्रार्थना कर रहा हूं और अगर हम उसका हृदय फाड़ सकें तो उसके हृदय में प्रार्थना कहीं नहीं मिलेगी। हो सकता है कि भय मिल जाए, फीयर मिल जाए, और घुटने टेकने का कोई संबंध प्रार्थना से है नहीं। भयभीत आदमी घुटने टेके हुए है। भय है भीतर लेकिन वो कह रहा है कि प्रार्थना है वो भय के ऊपर प्रार्थना का अर्थ थोप रहा है। हमने सब चीजें बदल दी हैं। हमने सब चीजों पर नये नाम बना दिये हैं। गुलाब का जो फूल है वो गुलाब का फूल नहीं है वो गुलाब के फूल को कुछ दीखता नहीं कि वो गुलाब का फूल है लेकिन हमने एक शब्द थोप दिया और कहा है कि यह है गुलाब का फूल। बस इस शब्द के साथ हम जी रहे हैं गुलाब के फूल में जो छिपा है उसे हमने कभी भी नहीं देखा। जिन्दगी में जो छिपा है उससे हम बच गए, चूक गए, उससे हम चूकते ही रहेंगे, क्योंकि हम उसे देखने की कोशिश नहीं करेंगे। मैंने एक घटना सुनी है। मैंने सुना है कि सन्यासी एक गाँव में बोलने गया उस गाँव के लोगों को समझा रहा है थोड़े से लोग सुनने आये हैं कुछ स्त्रियाँ भी आई हैं एक स्त्री के साथ उसका छोटा बेटा

भी आया है। उस बेटे ने बीच में खड़े होकर अपने माँ से कहा मुझे पिशाब लगी है, सारे लोग हँसने लगे उस बेटे की ओर देखने लगे। सभा समाप्त हो जाने पर उस सन्यासी ने उस स्त्री को अपने पास बुलाया और कहा कि अपने बेटे को समझा दो अगर कभी भीड़ में, समूह में, ऐसा हो भी तो सीधा नहीं कह देना चाहिए कि मुझे पिशाब लगी है कुछ और कह देना चाहिये। उस स्त्री ने कहा कि क्या कहे तो उस सन्यासी ने कहा कोई भी कोड बना दे, जैसे कि बच्चा कह सकता है कि माँ मुझे गाना गाना है, तुम समझ जाओगी, और नहीं कोई समझ पायेगा। बात खतम हो गई और माँ ने बेटे को समझा दिया कि जब भी पिशाब लगे तो कहा करे–कि मैंने गाना गाना है। साल भर बाद वो सन्यासी उस स्त्री के घर मेहमान हुआ। उस स्त्री को पड़ौस में कहीं शादी पर जाना था वो गई और अपने बेटे को सन्यासी के पास छोड़ गई और कहा कि जरा ध्यान रखना कोई बारह बजे होंगे रात, उस बेटे ने सन्यासी को जगाया और कहा कि स्वामी जी मैंने गाना गाना है। तो स्वामी जी ने कहा कि आधी रात को कोई गाना गाया जाता है चुपचाप सो जाओ लड़का थोड़ी देर चुप रहा, तो उसने कहा नहीं स्वामी जी चुपचाप नहीं सोया जा सकता मुझे गाना ही पड़ेगा। तो स्वामी जी ने कहा कि कैसा पागल लड़का है आधी रात कोई गाना गाया जाता है, सुबह गा लेना, उस लड़के ने कहा सुबह फिर से गायेंगे लेकिन अभी गाना है। स्वामी ने कहा कि यह कहाँ की मुसीबत यह स्त्री मेरे पास छोड़ गई, मैं दिन भर का थका हुआ हूं मैंने सोना है और तुम्हें गाना गाना है। चुपचाप सो जाओ और गड़बड़ मत करो लेकिन लड़का चुपचाप कैसे हो सकता था उसने फिर थोड़ी देर बाद कहा नहीं स्वामी जी गाना गाना ही पड़ेगा तो स्वामी जी ने कहा कि नहीं मानते हो, तो धीरे धीरे मेरे कान में गुन गुना दो।

हमने जिन्दगी में भी जो जैसा है उसको वैसा न मान करके कोड बनाये हुए हैं। हम कुछ और कर रहे थे। हमने पूरी जिन्दगी को Faulicify किया हुआ है। यह जो जिन्दगी का तथ्य है, जिन्दगी का जो सत्य है, उसे हमने फलैसीफाई किया हुआ है हम कुछ कुछ नाम दे रहे हैं और नाम दे दे कर सब मुसीबत खड़ी कर ली है। नाम दे देने की वजह से हमें जो सत्य है दिखाई नहीं पड़ रहा। जो नहीं है वो पकड़ने में आता है। है तो परमात्मा, काश हम नाम देने की प्रक्रिया The technique of naming दि टिकनिक आफ नेमिंग, उससे बच सकें तो परमात्मा हमें तत्काल दिखाई देगा। लेकिन बिना नाम लिये हुए नहीं रह सकते, फूलों को तो हम कहेंगे कि गुलाब है। आदमी होगा तो हम कहेंगे कि हिन्दू है, मुसलमान है, किताब होगी तो हम कहेंगे कि पवित्र है अपवित्र है। हम बिना नाम दिये जिन्दगी को देखने को राजी नहीं और इसलिए परमात्मा जो अनाम है, नेमलेस है, नाम देने से हमसे चूक जाता है। वो परमात्मा को भी नाम दे दिये। कोई कहता है, वो राम है, राम दशरथ के बेटे का नाम था। परमात्मा का नाम नहीं है। राम बहुत प्यारे आदमी थे, लेकिन उनका नाम परमात्मा का नाम नहीं है। कोई कहता है कि उसका नाम अल्ला है, ओम है, ब्रह्म है, कुछ और है, हजार नाम हमने दे दिए हैं। परमात्मा, जिसका हमें पता भी नहीं है, उसको हमने नाम दे दिये हैं और एक आदमी बैठ के राम नाम जपता है और सोचता है कि परमात्मा मिल जायेगा और जिसका कोई नाम नहीं वो राम राम जपने से कैसे मिल सकता है? वो कभी नहीं मिलेगा। खाली राम राम जपने से जिन्दगी खराब हो सकती है, समय व्यतीत हो सकता है।

मैं एक गाँव में गया था, तो उस गाँव में एक मन्दिर बनाया गया था। उस मन्दिर में हजारों किताबें रखी हैं और एक किताब में लाखों बार राम-राम लिखा हुआ है। उस मन्दिर में कोई सौ आदमी दिन रात बैठकर राम नाम लिखते रहते हैं और उस मन्दिर के भक्त सारे हिन्दुस्तान में हैं। जगह जगह से पोथियाँ भर करके उस मन्दिर को भेजते रहते हैं और वहाँ एक लायब्रेरी खड़ी हो रही है। उस मन्दिर को जो संभालते है उनने मुझसे कहा पता है आपको अरबों नाम

अब तक यहाँ आ चुके हैं किताबें भर गई हैं और अब हमारे पास जगह नहीं है, अब हमें नया मन्दिर बनाना पड़ेगा ? कितना धर्म का प्रचार हो रहा है कि लोग राम नाम लिख कर भेज रहे हैं। मैंने कहा धर्म का प्रचार हो रहा है कि पागलपन का प्रचार हो रहा है—यह किताबें बच्चों के काम आ सकती हैं यह किताबें खराब हो गई हैं राम राम दोहराने वाला सोच रहा है कि मैं परमात्मा को पा लूंगा। परमात्मा का कोई भी नाम नहीं। राम नाम दोहराने से तो मिलेगा ही नहीं। हमें तो जिन्दगी में जो नाम देने की जो आदत पड़ गई है उसे भी छोड़ देना पड़ेगा, हमें बिना नाम की चीजों को देखना पड़ेगा। इसका थोड़ा प्रयोग करेंगे, तो बहुत नया अनुभव होगा। एक बगीचे से निकलें तो किसी फूल को नाम न दें। बस खड़े हो जाय फूल के पास, मन तो कहेगा कि चमेली है मन तो कहेगा कि जुही है, लेकिन मन को कहना कि नहीं कुछ नाम देना ही नहीं ! क्योंकि जुही को तो कुछ मालूम नहीं है कि वो जुही है, जुही का कोई भी नाम नहीं गुलाब का भी कोई नाम नहीं है, सूरज का कोई नाम है, चांद तारों का कोई नाम है, हम भी बिना नाम के पैदा हुए हैं। हमने अपने को भी नाम दिया हुआ है। और उसी दिन से धोखा शुरू हो गया है। एक आदमी पैदा होता है तो हम कहते हैं कि तुम्हारा नाम राम है और यह जिन्दगी भर यही समझेगा कि मैं राम हूं, और कोई गाली देगा, तो वह लड़ने को तैयार हो जायेगा। लेकिन नाम कोई आदमी लेकर पैदा होता है ? हम सब बिना नाम के पैदा होते हैं, जिन्दगी अनाम है, सत्य का कोई नाम नहीं है, लेकिन हमारी आदत नाम देने की, बिना नाम के हम मानने को राजी नहीं हैं। कोई आदमी अगर हमें मिल जाय और कहे कि मेरा कोई नाम नहीं–तो हम कहेंगे कि तुम्हारा दिमाग खराब है। लेकिन वह ठीक कह रहा है दिमाग हमारा खराब है, नाम किसका है? मेरे एक मित्र हैं वो ट्रेन से गिर पड़े डाक्टर हैं सिर में चोट लग गई और सब भूल गए और अपना नाम भी भूल गए, अभी मैं उन्हें देखने गया और वो मुझे पहचाने नहीं, मैंने कहा–पहचाने नहीं आप ? तो उन्होंने कहा आप को कैसे पहचानें ? अपने को पहचानना मुश्किल हो गया है। मैं कौन हूं ? यही मुझे पता नहीं, उनके पिता ने मुझ को कान में कहा--आप कुछ भी मत सोचें। इन्हें कुछ भी पता नहीं इनका दिमाग खराब हो गया है। मैंने उनके पिता से कहा कि आपको पता है कि आप कौन हैं ? लड़के को कह रहे हैं कि दिमाग खराब हो गया। आपको पता है कि कौन हैं, बोले हां मुझे मेरा नाम पता है उसे अपना नाम भी नहीं पता है। गिरने से सब खराब हो गया है लेकिन नाम हम हैं नाम नहीं हैं, लेकिन हमने सब तरफ नाम दे दिये हैं और आदमी खो गया है शब्दों में नहीं नामों में।

अगर आदमी को ऊपर उठना हो इस सबके, तो हमें नाम देने की आदत छोड़नी पड़ेगी। चीजों को देखने की आदत शुरू करनी चाहिए, नाम देने की आदत बन्द कर देनी चाहिए ! अगर हम एक घंटे, चौबीस घंटों में बिना नाम दिये जी सकें तो जिन्दगी में एक नया द्वार खुल जायेगा जहां से परमात्मा प्रवेश होता है क्योंकि उसका कोई नाम नहीं। अगर एक घंटे भी हम रह सके कि नाम नहीं चाहिए शब्द नहीं बनायेगें, एक घंटे भी हम बिना सोचे रह सकें, क्योंकि ध्यान रहे अगर हम नाम न देंगे, शब्द न बनायेंगे तो विचार बन्द हो जायेगा ! विचार की प्रक्रिया नाम देने की प्रक्रिया है विचार टूट जायेगा, विचार समाप्त हो जायेगा, और जहां विचार बंद होता है, समाप्त होता है, वहां से ही वो द्वार खुलता है जहां से परमात्मा का प्रवेश होता है। क्योंकि निर्विचार में उसका द्वार खुलता है। थाटलैसनैस में जहां कोई विचार नहीं हैं वहां वह भीतर चला आता है। लेकिन हम तो विचार से भरे हुए हैं, हम चौबीस घंटे विचार में डूबे हुए है शब्द और शब्द और शब्द। हमारे मस्तिष्क में शब्द ही शब्द घूम रहे हैं। अगर हम एक दरवाजा बन्द करके एक कोने में बैठ जाएं और हमारे मन में जो शब्द घूम रहे हैं उसे एक कागज पर लिख लें तब हम अपने सगे मित्र को भी दिखाने में राजी न होगें वो कागज। क्योंकि वो कागज देखकर के हमें मालूम होगा कि क्या मैं पागल हूं। यह सब हमारे दिमाग में घूम रहा है। दिमाग में मक्खियों की तरह शब्द चक्कर लगा रहे हैं। दिमाग पूरे समय शब्दों से भरा हुआ है, वो कभी खाली नहीं हो

रहा है और शब्द जब तक भरे रहेंगे, भरें रहेंगे फिर, तब तक वो नहीं आ सकेगा जो शब्दों से बाहर है।

इसलिए दूसरी बात धर्म के संबंध में मैं आपसे यह कहना चाहता हूं कि निर्विचार होने की कला सीखनी पड़ेगी, तो ही हम धर्म से सम्बन्ति हो सकते हैं। मौन होने की, टू बी साइलेंट, सब तरफ से चुप होने की कला सीखनी पड़ेगी भीतर भी, बाहर भी, उस सन्नाटे में ही उसके पैरों की आवाज सुनाई पड़ती है। लेकिन हम तो इतने शोरगुल से भरे हैं कि बैंड बाजा बजता हुआ भी परमात्मा हमारे घर के बाहर से निकले तो शायद ही हमको सुनाई पड़े। और उसके कदमों की कोई चाप नहीं बनती कोई ध्वनि नहीं बनती, वो चुपचाप आता है। वो इतना चुपचाप आता है कि हमको पता नहीं चलता। हम अपने से भरे हैं। रवीन्द्र नाथने एक गीत लिखा— लिखा है रवीन्द्रनाथ ने एक मन्दिर था और उस मन्दिर के एक पुजारी को एक रात स्वप्न आया। मन्दिर में सौ पुजारी थे, बड़ा मन्दिर था, करोड़ों लाखों की सम्पति थी, हजारों भक्त थे। बड़े पुजार को स्वप्न आया कि कल भगवान मन्दिर में आने वाला है पहले तो पुजारी ने भरोसा न किया। यह बड़े मजे की बात है मन्दिर में जाने वाले जितना भरोसा भगवान पर करते हैं, उतना मन्दिर में जो पुजारी खड़ा है वो भी नहीं करता। क्योंकि उसे तो दुकान का सारा हाल मालूम होता है। यह सब जाल उसी का ही खड़ा किया है। वो भली भांति जानता है, कोई भगवान वगैरह नहीं है, पुजारियों से ज्यादा नास्तिक आदमी खोजना मुश्किल है, वो सिर्फ ट्रेड है, उनके लिए तो धन्धा है, वो धंधा पूरा कर रहे हैं, वो धंधे का पूरा का पूरा मूल समझ रहे हैं। कैसे चलता है, लेकिन उन्हें परमात्मा से कोई मतलब नहीं। उन्हें किसी और बात से मतलब है, उसे वो पूरा कर रहे हैं। पुजारी को विश्वास न आया कहा कि स्वप्न ही मालूम होता है भगवान कभी नहीं आयेगा। लेकिन दूसरे पुजारियों को बड़े पुजारी ने बताया कि मैंने एक स्वप्न देखा है, दूसरे पुजारियों ने कहा स्वप्न सच भी हो सकता है। क्योंकि जिन्दगी बड़ी अजीब है, जिसको हम स्वप्न कहते हैं वो कभी कभी सच भी हो सकता है। तो प्रतीक्षा करनी चाहिए कि कहीं भगवान आ न जाएं। बड़े पुजारी ने कहा कि पागल हो गये हो? वर्षों से मैं इस मन्दिर में पूजा करता हूं वह कभी भी नहीं आया। पूजा करने वालों को तो मैंने आते जाते देखा है। लेकिन पूजा लेने वालों को मैंने कभी आते जाते नहीं देखा। सपना ही है। लेकिन दूसरे पुजारी ने कहा —कि स्वप्न ही है, तो भी हर्ज क्या है? हम तैयारी तो पूरी कर लें अगर न आया तो कोई हर्ज नहीं। अगर आ गया और मिल गया तो कितनी मुश्किल होगी? अगर हम तैयार न हुए। बड़ी मुश्किल हो जायेगी यह सोचके कि कहीं वो आ ही न जाये उन्होंने मन्दिर की तैयारी की। मन्दिर को साफ सुथरा किया, दीप जलाये, भोग बनाया भगवान के लिए, सब तैयारियां की, रोज भी वह भोग लगाते थे भगवान के लिए लेकिन वो भोग उन्हीं को ही लग जाता था इसलिए वो भोग की तैयारी की बात और ही थी। आज उनको शक पड़ रहा कि हम क्या पागल पन कर रहे हैं? कौन आयेगा? फूल किसके लिये रखे हैं? दिये किसके लिए जला रहे हैं? सिर्फ पौलिटि-कली, रिलीजैसली नहीं, राजनीतिक ढ़ंग से, कहीं आ ही न जाय, इंतजाम कर लेना जरूरी है। उन्होंने इंतजाम कर लिया। सांझ हो गई वो नहीं आया। वो बार बार बाहर जाकर देख आये, वो नहीं आया। क्यों कि हमें जिसे जाके देखना पड़े बाहर वो नहीं आयेगा। क्योंकि वह आया है भीतर। वो बाहर देख आये बार-बार सीढ़ियों पर जाकर देखा फिर उन्होंने कहा कि नहीं आया! नहीं आया! बड़े पुजारी ने कहा पागलो मैंने सुबह ही कहा था। अब जो भोग हमने बनाया वो भोजन कर लें। अब सो जायें। दिन भर वे व्यर्थ थक गए और उसके आने की कोई उम्मीद नहीं। भगवान कभी नहीं आते। उन्होंने भोजन कर लिया। वे दिन भर के थके मांदे थे, प्रतीक्षा करते सो गये, आधी रात गए द्वार पर जैसे कोई रथ आकर रुका। रथ के चक्कों की आवाज, तो किसी पुजारी की नींद टूट गई और उसने कहा मालूम होता कि उसका रथ आ गया है लेकिन दूसरे पुजारी ने कहा चुप रहो ना समझ दिन भर

परेशान किया है। रथ नहीं है, यह बादलों की गड़गड़ाहट है, सो जाओ, दिन भर खराब किया और अब रात मत खराब करो। वे सो गए। कोई सीढ़ियां चढ़ा आवाज आई फिर किसी पुजारी ने कहा कि मालूम होता है कि कोई सीढ़ियां चढ़ रहा है। दूसरों ने कहा चुप रहो, कोई सीढ़ियां नहीं चढा, रात को कौन सीढ़ियां चढ़ेगा, कोई नहीं है, भ्रम हुआ है, कामना की है मन में आयेगा--आयेगा इस लिये भ्रम हो रहा है। सो जाओ फिर किसी ने द्वार पर दी है दस्तक, फिर किसी ने कहा है द्वार पर दस्तक देता है। बड़े पुजारी ने कहा नासमझो सो जाओ हवा के झोंके दीवारों को फड़फड़ाते हैं, कोई नहीं है, हवा धक्के मार रही है। रात गुजर गई। वह सुबह उठे द्वार पर रथ के आने के चिन्ह थे सीढ़ियों पर किसी के पैरों के चिन्ह थे, द्वार को किसी ने थपथपाया था, वह तब सब रोने लगे। वह सब रोने लगे कि अवसर चूक गया है। यह गीत जब मैंने पढ़ा तो सोचा कहीं ऐसा तो नहीं कि यह अवसर हम सब से चूक जाता हो। जब किसी के पद चिन्ह सुनाई पड़े उन्होंने कहा कि भ्रम हुआ है। पर जब रथ के चाप की आवाज आई थी तो उन्होंने कहा —बादलों की गड़गड़ाहट है और जब किसी ने द्वार थप--थपाया उन्होंने कहा हवा के झोंके होंगे। उन्होने विचार कर लिया सोये-सोये वे उठ कर न गए वहां तक। उन्होंने शब्द बना लिये, उन्होंने देखा नहीं जा कर क्या है ? उन्होंने नाम लिये शब्द दे दिये और विचार कर लिया चुपचाप अपनी जगह पर रहे। हम जिन्दगी भर यही करते हैं ऐसा नहीं कि परमात्मा रात किसी मन्दिर पर आता है हम सबके मन्दिर पर रोज ही उसका आना होता है। प्रतिपल उसका आना होता है। लेकिन हम शब्द दे कर चूक जाते हैं।

एक फकीर था साईं बाबा ! उनके पास एक सन्यासी आता था लेकिन साईं तो रहते थे मस्जिद में तो कुछ पक्का नहीं था कि वह हिन्दू है या मुसलमान ! असल में सन्तों का कुछ पक्का नहीं हो सकता। सिर्फ असंतों का पक्का हो सकता है कि वह हिन्दू है या मुसलमान। संत का क्या पक्का। मस्जिद में रहते थे तो जो हिन्दू संन्यासी जो उनका शिष्य हो गया था वो तो मस्जिद में नहीं रुक सकता था। तो वो गाँव के बाहर एक मन्दिर में रुका था लेकिन प्रेम इतना था साईं के प्रति कि वो रोज भोजन बनाकर पहले साईं को खिलाता और फिर जाकर भोजन करता। तीन चार मील धूप में चलकर उसे आना पड़ता तो साईं ने एक दिन उससे कहा कि तू इतनी दूर क्यों आता है मैं वहीं आ जाऊँगा। दोपहरी में बड़ी धूप होती है मैं खुद ही कल आ जाऊँगा। उसने संन्यासी से कहा, यह मेरा सौभाग्य है। इससे बड़ा मेरा सौभाग्य और क्या हो सकता है कि आप मेरे झोपड़े पर आ जायेंगे। तो कल फिर प्रतीक्षा करूंगा। साईं ने कहा प्रतीक्षा तो करना, लेकिन, पहचान तो लेगा या नहीं ? उस संन्यासी ने कहा मैं और आप को न पहचानूं ? पहचान लूंगा। साईं ने कहा कि मैं पहले भी आया हूं। लेकिन तू पहचान न सका। उस संन्यासी ने कहा कि कल मैं आंख भी न चूकूंगा। कहीं भूल चूक न हो जाये पहचान लूंगा मैं, मैं प्रतीक्षा करूँगा, बारह बज गए खाने का समय हो गया लेकिन जिसको आना था वो तो नहीं आये, एक बज गया फिर वो हिन्दू सन्यासी परेशान हुआ थाली ले भागा मस्जिद की तरफ, जाकर थाली साईं के सामने रखी और कहा कि आप आये नहीं। तो साईं हंसने लगे और उन्होंने कहा कि मैं आया था, लेकिन तू, मुझे नहीं पहचान सका। कहने लगा कि कोई भी नहीं आया। सिर्फ एक कुत्ता जरूर वहां आया। वो थाली में मुंह मारने लगा, तो मैंने उसे रोक दिया। मैंने कहा कुत्ते हट। तो साईं ने कहा वही मैं था। कल फिर आऊंगा। तू पहचानेगा कि नहीं ? कुत्ते को कैसे मान लेता। कुत्ता शब्द तो बाधा देता है जैसे ही दिखाई पड़ा उसने कहा कुत्ता आ गया। तो परमात्मा रुक गया। कुत्ते में भी परमात्मा है लेकिन कुत्ता शब्द बाधा डाल देगा। दूसरे दिन उसने कहा कि चाहे अब कुत्ता आ जाये, तो उसने कहा कि पहिचान लूंगा लेकिन कुत्ता नहीं आया। तो जिन्दगी का कोई भरोसा नहीं, जिन्दगी रोज बदलती जाती है, एक भिखमंगा आया। लेकिन वह कोढ़ी था उसने कहाकि दूर हट भोजन को अपवित्र मत कर देना। फिर दो बज गए और भागा हुआ वह मस्जिद को गया

उसने साईं को कहा कि आप आये नहीं, मैं आज भी बहुत राह देखता रहा। साईं ने कहा आया—तो आज भी, लेकिन आज कोढ़ था मेरे ऊपर, तब तो वो हिन्दू संन्यासी रोने लगा उसने कहा तब तो बड़ी मुसीबत हो गई है। फिर मैं आपको कैसे पहचान लूंगा। तो फिर साईं ने कहा कि तू शब्द दे देता है। फिर कठिनाई हो जाती है। वही अभाव हो जाता है। मैं कल कह दिया कि यह कुत्ता है फिर मुश्किल हो गई बात। मैं आज कह दिया यह भिखमंगा कोढ़ी है। बात फिर मुश्किल हो गई है। तो शब्द मत दे। तो मैं तुझे दिखाई दे सकता हूं, लेकिन हम सब शब्द देने के आदी हो गए हैं इसलिए परमात्मा हमें दिखाई नहीं पड़ सकता है। परमात्मा को शब्द दिये बिना ही जानना पड़ेगा। अगर धर्म के सीक्रेट को, धर्म के राज को या इस रहस्य को भी जानना हो तो उसे शब्द देने की जो हमारी गलत आदत पड़ गई है, उस आदत को छोड़ देना चाहिए। निशब्द होने की संभावना है, शून्य होने की संभावना विकसित करनी पड़ेगी, तब ऐसा नहीं है कि किसी स्वर्ग में जाकर ही परमात्मा मिलेगा। तब वो कुत्ते में भी मिल जायेगा। भिखारी में मिल जायेगा। सड़क के किनारे पड़े पत्थर में भी मिल जायेगा। पड़ोस में आपके जो भी बैठा है, उसमें भी मिल जायेगा। भीतर झांके तो स्वयं में ही दिख जायेगा। परमात्मा का अर्थ है—अस्तित्व, परमात्मा का अर्थ है—वो जो है। (दैट विच इज) परमात्मा का अर्थ है (दि टोटेलटी) परमात्मा कोई व्यक्ति नहीं है परमात्मा समग्र अस्तित्व के जोड़ का नाम है। हम सबकी जोड़। अगर कोई (ग्रेंड टोटल) हो सके। आखिरी जोड़ जहां हम सब जुड़ गए हों। उस जोड़ का नाम परमात्मा है। इसलिए उसे खोजने और कोई हिमालय जाने की जरूरत नहीं है और उसे खोजने कोई मक्का और काबा जाने की जरूरत नहीं है। उसे खोजने के लिए काशी सहयोगी न होगी। उसे खोजना हो तो हमें देखने का ढंग बदलना होगा। हमारे देखने का ढंग अभी शब्दों से भरा है। विचारों से घिरा है। उसे देखना हो तो हमें देखने का एक ऐसा ढंग खोजना पड़ेगा, एक ऐसी आंख जो शब्द और विचार के बाहर देखती है, जो सिर्फ देखती है और सोचती नहीं, और ऐसी तीसरी आंख ही धर्म के अनुभव में ले जाने का मार्ग बन जाती है।

तो अन्तिम यह बात कह दूं तीसरी आंख जो सिर्फ देखती है और सोचती नहीं लेकिन हमने देखना बन्द कर दिया है। हम देखते हैं और उससे पहले सोचना शुरू कर देते हैं। जब भी हम देखते हैं सोचना साथ में आ जाता है, हम बिना सोचे देख ही नहीं सकते, तो फिर हमारे भीतर धार्मिक आंख भी पैदा नहीं हो सकती। बिना सोचे देखने की क्षमता विकसित करनी पड़ेगी। वही है दृष्टि वही है दर्शन। लेकिन हम सोचते निकल जाते हैं, हम प्रत्येक चीज पर सोचते हैं। हम बिना सोचे कुछ भी नहीं देखते। आप ख्याल करेंगे तो बहुत हैरान हो जायेंगे हमने कभी कुछ बिना सोचे नहीं देखा है। रात आकाश में चांद हो तो आपने बिना सोचे नहीं देखा है। रात का सन्नाटा है तो आपने बिना सोचे नहीं देखा है। और यह तो दूर की चीजे हैं। अगर आप पति हैं तो आपने पत्नि की आंख में भी बिना सोचे नहीं देखा है। अगर आप बाप हैं तो आपने अपने बेटे की आंख में भी बिना सोचे नहीं देखा। अगर आप बिना सोचे कुछ भी देखने में समर्थ हो जायें एक क्षण के लिए भी, तो एक झटके से द्वार खुल जायेगा और परमात्मा आ जायेगा। बेटा बिदा हो जायेगा और परमात्मा आ जायेगा वृक्ष विदा हो जायेगा और परमात्मा आ जायेगा। दिवाल खो जायेगी और परमात्मा आ जायेगा। एक क्षण भी अगर यह बिजली चौंक जाये हमारे भीतर, कि हम बिना सोचे देख पायें। यह हो सकता है यह हमारे ख्याल में नहीं है जब बच्चा पहली दफा पैदा होता है तो वह सोचता नहीं वह देखता है। अगर आप उसके सामने कोई लाल रंग की चीज ले जाते हैं तो वह ऐसा नहीं सोचता कि यह लाल रंग है उसका उसे कुछ पता नहीं वह सिर्फ देखता है। वह यह भी नहीं जानता कि गुनगुना है यह गुड़िया है वह कोई भी शब्द नहीं जानता वह सिर्फ देखता है। जीसस से किसी ने पूछा था कि तुम्हारे परमात्मा को कौन देख सकेगा तो

जीसस ने कहा कि जिनके बच्चों जैसी आँख, जीसस ने कहा था जो बच्चों जैसे सरल हैं, वही देख पायेंगे। मैं नहीं समझता कि बच्चों जैसे सरल होने का ख्याल हमारे मन में आ गया हो बच्चे की एक ही खूबी है, जो बूढ़े के पास नहीं रह जाती है, बच्चा बिना सोचे देख पा सकता है। बूढ़ा बिना सोचे देख नहीं पाता। बच्चे और बूढ़े में एक ही बुनियादी अन्तर है बच्चे का जो प्रदर्शन है जो दर्शन है वो शुद्ध है। उसमें कोई शब्द बाधा नहीं डाल सकता वो सिर्फ देखता है इसलिये बच्चे की दुनिया के आनन्द का हिसाब लगाना बहुत कठिन है। सभी बच्चे परमात्मा के निकट होते हैं। फिर हम उन्हें व्यवस्था देकर परमात्मा से दूर कर देते हैं। बूढ़ा आदमी बहुत दूर पहुंच जाता है परमात्मा से। सभी बच्चे परमात्मा के निकट होते हैं और उनके देखने की जो कला है वो सिर्फ इतनी कि वो उसे सीधा देख पाते हैं। इमीजिएट। बीच में कोई बाधा नहीं पड़ती, उस तरफ वो होता है, जिसको वो देखते हैं, इस तरफ वो होते हैं। बीच में कुछ नहीं होता। बीच में कोई बाधा नहीं होती, आंखे खुली और साफ होती हैं। धार्मिक आदमी उसे कहता हूं मैं जिसने बाद में फिर से बच्चे की आँखे पा ली हैं। जिसने बच्चे जैसा इनोसैंट चित्त, निर्दोष चित्त फिर से पा लिया है। यह हो सकता है इसमें कुछ कठिनाई नहीं, सिवाय आदत के, यहां कोई कठिनाई नहीं हो सकती। हमारी एक आदत है और हम आदत के गुलाम हैं। मेरे एक मित्र प्रिवीकौंसिल में वकील थे। बड़े वकील थे, उनकी एक आदत थी जब भी वो कोई मुकदमा लड़ते जहां भी कोई आरगुमेंट (Argument) उलझ जाता तो वो अपने कोट की बटन घुमाने लगते। यह आदत हो गई जब भी वह कोट की बटन घुमाने लगते उनमें तर्क की गति तीव्र हो जाती और वह सोच पाते। जब भी वो मुश्किल में होते वह बटन घुमाते। हममें भी कोई चिन्ता हो जाय तो कोई सिर खुजलायेगा, कोई दाढ़ी में हाथ लगायेगा और कोई कुछ और करेगा। प्रिवीकौंसिल में एक बहुत बड़ा मुकदमा था। एक हिन्दुस्तानी रियासत का मुकदमा था। उस रियासत का मुकदमा लड़ रहे थे। करोड़ों का मामला था। विरोधी वकील बहुत दिनों से यह देख रहा था जब भी वो बटन पर हाथ रखते हैं तब बहुत ढंग से आरगू कर पाते हैं। तो वो ठीक से तर्क कर पाते हैं। तो उसने उसके ड्राइवर को मिला लिया और कहा कि कल तुम जब कोर्ट में उनका कोट लाओ तो पहली बटन तोड़ लाना। वो कोट को ड्राईवर उठा कर लाता था कोर्ट में। तो तुम पहली बटन तोड़ देना। उसने कुछ पैसे दे दिये होंगे। उसने वो बटन तोड़ दिये। वह मेरे मित्र कोट को डाल कर कोर्ट में खड़े हो गए और उन्होंने जिरह शुरू करदी। और जब उलझन का मामला आया, तो उनका हाथ बटन पर गया और जैसे सब खो गया, उन्होंने कहा कि जिन्दगी में पहली बार मेरा सिर घूम गया। मुझे सब चीजें घूमती मालूम पड़ीं। मैं फौरन कुर्सी पर बैठ गया। मेरे दिमाग में सारी दलीलें खो गई। बटन क्या खो गई, सब गड़बड़ हो गई। वह पहली दफा हारे और हारने का कारण क्या था वो छोटी सी बटन। हम सोच भी नहीं सकते किसी कोर्ट में एक कोट की बटन से मुकदमे के जीतने का क्या संबंध हो सकता है, आदत।

आपने शायद सुना भी न होगा (क्योंकि इतिहास में बहुत सी कीमती बातें छोड़ जाते हैं और जो व्यर्थ की बातें लिख देते हैं) नेपोलियन नेलसन से हारा आपको पता भी न होगा कि वह क्यों हारा ? एक बहुत अजीब बात से हारा। नेपोलियन छः महीने का छोटा बच्चा था, एक जंगली बिल्ली उसकी छाती पर चढ़ गई थी, उसकी आया कहीं पास ही गई थी कि बिल्ली चढ़ गई छाती पर। आया आई बिल्ली को छाती से उतार दिया। छाती पर बिल्ली के चढ़ने से नेपोलियन घबरा गया, फिर बाद की जिन्दगी में शेरों से लड़ सकता था, लेकिन बिल्ली को देखकर दब जाता। वो छः महीने में अनकांशियस तक, अचेतन तक, बिल्ली बैठ गई, छाती पर। बिल्ली को देख कर नेपोलियन छः महीने का हो जाता। छः महीने के बच्चे से ज्यादा उसकी हिम्मत न रह जाती। युद्ध में तोप के सामने सीना लगा सकना लेकिन बिल्ली का पंजा बहुत खतरनाक चीज है। जिस दिन वो हारा

नेलसन सत्तर बिल्लियां अपनी फौज के आगे बांध कर ले गया था। दुश्मन जो जीता वो बिल्ली बाँध कर ले गया, क्योंकि उसे किसी तरह पता चल गया कि वो बिल्ली से डरता है और जब नेपोलियन ने बिल्लियां देखीं तो उसने अपने पड़ोस के सेनापतियों से कहा कि तुम संभालो मेरा होस खो गया है अब मेरी ताकत है नहीं, लड़ने की। मेरे हाथ पैर कंपते हैं, इसमें मेरा कोई काबू नहीं है। यह बिल्ली कैसे ले आया है नेलसन। जीत मुश्किल है नेपोलियन पहली दफा हारा वो आखिरी हार पहली हार थी। लेकिन हम कहेंगे कि बिल्ली को देखकर के हार जाना? सिर्फ एक आदत की बात है, मनुष्य के मन पर भी शब्द की आदत है।

एक आदत की बात है। हम परमात्मा को खो रहे हैं एक गलत आदत की वजह से कि हमारे पास थाटलैस विजन नहीं है। हमारे पास विचार रहित दर्शन और दृष्टि नहीं है। विचार रहित दर्शन का नाम ही ध्यान है। मेडीटेशन है। अगर विचार रहित हम देख पाये तो वो परमात्मा अभी और यहीं मिल सकता है। धर्म को खोजने के लिए दूर जाने की जरूरत नहीं। धर्म को अगर खोजने जाना हो तो अपने मन की गलत आदत को समझने और उसके ऊपर उठ जाने की बात है। परमात्मा को हमने खोया नहीं हमारे मन की गलत आदत के कारण एक जाल पैदा हो गया है, और जिसमें हम खो गए है। एक छोटी सी कहानी और मैं अपनी बात पूरी करूंगा। मैंने सुना है कि एक बहुत बड़ा महाकवि, एक रात, नाव पर, बजरे मे यात्रा कर रहा था उसने एक मोमबत्ती जला रखी थी। मोमबत्ती के प्रकाश में एक किताब पढ़ रहा था। वो किताब सौन्दर्य शास्त्र पर थी, वह आधी रात तक किताब पढ़ता रहा, थक गया, ऊब गया, किताब बंद करके फूंक मार कर मोमबत्ती बुझा दी, जैसे ही उसने मोमबत्ती बुझाई, वो दंग रह गया। जब तक मोमबत्ती जल रही थी कि उसे पता ही नहीं था कि बाहर पूर्णिमा की रात है, पूरा चांद बाहर आकाश में है, और झील पर चारों तरफ सौन्दर्य बरस रहा है। उसे पता ही नहीं था वह अपनी किताब में खोया हुआ था किताबों में सौन्दर्य नहीं होता वह अपनी किताब में खोया हुआ था, सौन्दर्य शास्त्र पर किताबें होती हैं, सौन्दर्य किताबों में नहीं होता। सौन्दर्य कहीं बाहर बरस रहा है, चारों तरफ फैला हुआ है, लेकिन वो अपनी किताब में डूबा हुआ है और मोमबत्ती जल रही थी।। तो मोमबत्ती के प्रकाश के कारण चांद का प्रकाश भीतर भी नहीं आ पा रहा था। खिड़कियों से बाहर फैल गया था जैसे मोमबत्ती बुझी खिड़कियों से, द्वार से, रंध्र रंध्र से चांद भीतर आकर नाचने लगा, वो कवि तो चौंक गया वो कवि भी नाचने लगा। उस कवि ने अपनी डायरी में लिखा है कि मैं भी कैसा पागल था। सौन्दर्य चारों तरफ मौजूद था लेकिन मैं उसे एक किताब में खोज रहा था। सौन्दर्य चारों तरफ बरस रहा था और मैं शब्दों में खोज रहा था। सौन्दर्य चारों तरफ खिल रहा था लेकिन मैं उसे एक धीमी सी मोमबत्ती जलाए हुए उसको रोके हुए था।

जिस दिन आपको परमात्मा का पता चलेगा उस दिन आपको यह भी पता चलेगा कि परमात्मा चारों तरफ बरस रहा है, लेकिन आप शब्दों की किताब में विचारों की किताब में कहीं उलझे हुए हैं और अपने अहंकार की मोमबत्ती जला कर बैठे हैं। और उसमें अहंकार की छोटी सी रोशनी है, पीली है रोशनी, गंदी है, धुंआ देती है, लेकिन पीली रोशनी है अहंकार की, परमात्मा की चाँदनी रोशनी जिसमें पीलापन भी नहीं धुंआ भी नहीं है, गंदगी भी नहीं, जो सदा ताजी है कभी बासी भी नहीं होती वो परमात्मा की रोशनी बाहर खड़ी राह देख रही है कब आप अपनी मोमबत्ती को बुझा दें? लेकिन हम अपनी मोमबत्ती को हर समय ले जा रहे हैं और उसको और बढ़ाए जा रहे हैं कि कहीं मोमबत्ती न बुझ जाए और हम अपनी किताब में और डूबे जा रहे हैं, ज्ञान किताबों में नहीं, धर्म का ज्ञान किताबों में नहीं है, विज्ञान किताबों में है। इसलिये विज्ञान लायब्रेरी में मिल सकता है, लेबोट्री में मिल सकता है, यूनिवर्सिटी में मिल सकता है। धर्म की कोई लायब्रेरी नहीं, कोई लेबोट्री नहीं, कोई यूनिवर्सिटी नहीं वो कहीं भी नहीं मिल सकता

क्योंकि वह किताब में नहीं है। इसलिए वह सब चीजों की शिक्षा दे सकते हैं। एग्रीकलचर पढ़ा सकते हैं। केमिस्ट्री पढ़ा सकते हैं। फिजिक्स पढ़ा सकते है। फिलासफी पढ़ा सकते हैं। सिर्फ रिलीजन नहीं पढ़ाया जा सकता। धर्म नहीं पढ़ाया जा सकता। क्योंकि धर्म चारों तरफ मौजूद है। उसको जानने के लिए तो हमको अपने मन की आदत को, कंडीशन को, मन का जो हमारा ढंग है उसको बदल देना पड़ेगा। ख्याल आ जाये तो बदल देना कठिन नहीं है। फूल के पास से गुजरें, तो कृपा करके दो क्षण उसे कोई नाम न दें। उसको देखें, सिर्फ उसको देखें, जो है। तब फूल अचानक नया हो जायगा उसकी पखुड़ियां परमात्मा की पखुड़ियां हो सकती हैं और रात को जब सोयें और तारों को जब देखें तो उसको भी कुछ नाम न दें। तारा भी न कहें सिर्फ देखें। जस्ट सीइंग (Just seeing) और तब तारों से इतनी शान्ति बरसने लगेगी जो परमात्मा की है। जब किसी आदमी के चेहरे में झांके तो नाम मत दें, हिन्दू मुसलमान मत कहें। जाति न दें कुछ नाम न दें और सिर्फ उसकी आँख में झांके। अगर एक आदमी की आँख में भी अगर आप चुपचाप झांक पाने में भी समर्थ हो जायेंगे तो हमने परमात्मा की आँख में झांक लिया है। उसके बाद भूलना मुश्किल हो जायेगा। जो देखा था वो कौन था। धर्म मेरे लिए एक अनुभव है एक (eXperience) है। उसे आप करें तो ही जान सकते हैं, उसे कोई बता नहीं सकता, उसे बताने का कभी कोई उपाय नहीं रहा। लेकिन फिर मैं क्या कर रहा हूं, घंटे भर से, जब उसे बताया नहीं जा सकता, तो फिर मैं घंटे भर आपको कुछ क्यों कह रहा हूं? उसे बताया नहीं जा सकता लेकिन उसकी तरफ प्यास जगाई जा सकती है। मैं आपको सरोवर तक नहीं पहुंचा सकता, लेकिन सरोवर है इसकी गवाही दे सकता हूं। मैं आपको पानी तक नहीं ले जा सकता लेकिन आपके भीतर प्यास है, उसको उकसा सकता हूं। दुनियां के सारे श्रेष्ठ पुरुषों ने कृष्ण क्राइस्ट, नानक, बुद्ध ने सत्य नहीं दिया सिर्फ सत्य की प्यास जगाई। परमात्मा नहीं दिया, सिर्फ परमात्मा की प्यास जगाई है। और अगर प्यास जग जाए और आप खुद ही उस सरोवर तक पहुंच जाएगे क्योंकि वह सरोवर दूर नहीं आपके घर के ठीक पीछे है। जरा गर्दन घुमायें और पीछे देखें वहां सरोवर है। लेकिन प्यास हो न हो तो गर्दन हम क्यों घुमाए? प्यास हो तो गर्दन भी घूम जाए। प्यास हो तो सरोवर भी दिख जाय, प्यास ही न हो तो? लेकिन प्यास है हमने उस प्यास को झूठे नाम दे दिये हैं।

एक आदमी चाहता है कि मैं सबसे ऊँचे पद पर पहुंच जाऊं एक झूठा नाम दे दिया वो कितने भी बड़े पद पर पहुंच जाए तो भी कुछ न होगा। प्यास जारी रहेगी क्योंकि एक ही पद है जो सब प्यास मिटाता है। वो परमात्मा का पद है। कहीं प्यास नहीं मिटेगी। एक आदमी कहता है मैं बहुत धन इकट्ठा कर लूं। अमरीका मे एक अरब पति मरा है, 'न्यू कार्न' मरते समय उसकी कोई दस अरब की सम्पत्ति थी, किसी मित्र ने कहा कि तुम तो तृप्त हो गए होगे। तुम तो बहुत छोड़े जा रहे हो, मित्र ने गौर से देखा। उसने कहा:—क्या खाक छोड़े जा रहा हूं। दस अरब। मेरा इरादा सौ अरब रुपये कमाने का था। उसने ऐसे कहा जैसे दस नये पैसे है, लेकिन सौ अरब रुपये उसके पास होते तो क्या फर्क पड़ जाता। कोई नहीं फर्क पड़ता, इच्छा और आगे चली जाती वो कहती हजार अरब रुपये चाहिए, करोड़ अरब रुपये चाहिए इच्छा और आगे आगे बढ़ जाती। लेकिन क्या करोड़ अरब रुपये मिल जाते तो बात पूरी हो जाती? नहीं, हमारे प्राण किसी ऐसी संपत्ति के लिए लालायित हैं जो आनन्द दें। और हम कुछ गलत सोच रहे हैं। परमात्मा को पाकर ही धन की दौड़ मिटती है उससे पहले नहीं क्योंकि वह परम धन है उसके बाद फिर किसी संपदा की जरूरत नहीं रह जाती। पद की दौड़ उसे पाकर ही मिटती है क्योंकि वह परम पद है। असल में परमात्मा को पाकर पाने की सारी दौड़ मिट जाती है।

●●●

(आचार्य श्री का २१ मार्च १९७० को पंजाब एग्रीकलचर यूनीवर्सिटी लुधियाना में हुआ एक प्रवचन)

एक शुभ समाचार :

आचार्य श्री की ज्योतिर्मय वाणी का मासिक बुलेटिन

सिंहनाद

(गुजराती भाषा में)

मूल्य : वार्षिक २ रु०
एक प्रति २० न. पै.

(शीघ्र सदस्यता ग्रहण करके पावन आयोजन में योगदान कीजिए)

प्रकाशक : श्री नटु भाई ए० मेहता,
मुकुंद एवं जीवन जागृति केन्द्र परिवार,
२१, संस्कार सोसाइटी, टैगोर रोड,
सुरेन्द्र नगर।

जीवन संगीत से आलोकित : नई साज सज्जा में

ज्योति शिखा

(आचार्य श्री के विचारों की आध्यात्मिक त्रैमासिकी)

संपादक : श्री महिपाल

मूल्य : वार्षिक : ५ रु०
एक प्रति : १)२५ न० पै०

प्रकाशक : जीवन जागृति केन्द्र,
रूम नं० ५३, एम्पायर बिल्डिंग,
डा० डी० एन रोड, बंबई : १

आचार्य श्री का प्रकाशित साहित्य

		हिन्दी	गुजराती	मराठी
१.	साधना पथ	३।००	३।००	३।००
२.	क्रांति बीज	३।००	२।५०	२।५०
३.	सिंहनाद	१।५०	१।२५	३।००
४.	मिट्टी के दिए	३।००	३।५०	—
५.	पथ के प्रदीप	३।००	३।००	८।००
६.	संभोग से समाधि की ओर	३।५०	३।५०	—
७.	आचार्य रजनीश समन्वय, विश्लेषण, संसिद्धि	७।५०	—	—
८.	मैं कौन हूं ?	२।००	२।००	—
९.	नए संकेत	२।००	१।७५	—
१०.	अज्ञात की ओर	२।००	२।००	—
११.	सत्य की खोज	३।००	—	—
१२.	अंतर्यात्रा	३।५०	—	—
१३.	शांति की खोज	२।००	—	—
१४.	सत्य के अज्ञात सागर का आमंत्रण	१।२५	१।५०	—
१५.	सूर्य की ओर उड़ान	१।००	१।००	—
१६.	प्रेम के पंख	०।७५	०।७५	०।७५
१७.	कुछ ज्योतिर्मय क्षण	१।००	०।७५	—
१८.	अमृत कण	०।६०	०।५०	०।५०
१९.	अहिंसा दर्शन	०।५०	०।५०	०।५०
२०.	नई दिशा, नई बात	०।३०	—	—
२१.	न आंखों ने देखा न कानों ने सुना	०।१५	—	—
२२.	क्रांति के बीच सबसे बड़ी दीवार	०।३०	—	—
२३.	बिखरे फूल	०।३५	—	—
२४.	जीवन और मृत्यु	—	१।००	—
२५.	नए मनुष्य के जन्म की दिशा	०।७५	०।७५	—
२६.	अस्वीकृति में उठा हाथ (भारत, गांधी और मेरी चिंता)	५।००	—	—

प्राप्ति स्थल :

[१] जीवन जागृति केन्द्र, रूम नं. ५३, एम्पायर बिल्डिंग, डा० डी. एन. रोड, बंबई : १

[२] मोतीलाल बनारसी दास, बंगलो रोड, जवाहर नगर, दिल्ली–७।

[३] स्वदेशी वस्तु भंडार, जामनगर।

[४] आर. अंबानी एंड कं०, अपोजिट : जिमखाना, राजकोट।

[५] चंद्रकांत पटैल, आमोपालव, बैंक आफ इंडिया के सामने, रावपुरा, बड़ौदा।

[६] मोतीलाल बनारसी दास, नेपाली खपरा वाराणसी।

[७] मोतीलाल बनारसीदास, अशोक राजपथ, पटना।

[८] भारतीय संस्कृति भवन, माई हीरांगेट, जलंधर शहर।

[९] नरसिंह भाई पटैल, सहकारी मुद्रणालय, कोठारी मार्ग, सुरेंद्रनगर।

[१०] सस्तु किताब घर, पथ्थर कुवां, रिलीफ रोड, अहमदाबाद।

[११] बालगोविंद कुबेरदास, गांधी रोड, अहमदाबाद।

[१२] सर्वोदय साहित्य भंडार, महात्मा गांधी मार्ग, इन्दौर–२

[१३] हीराभाई मेहता, पांचघरु, ७०, नेताजी सुभाष रोड, कलकत्ता : १

[१४] सुषमा साहित्य मंदिर, जवाहरगंज, जबलपुर।

[१५] युनिव्हर्सल बुक सर्विस, सिटी कालेज के सामने, जबलपुर।

[१६] श्री आर. के. पुंगालिया, १०१, टिम्बर मार्केट, पूना–२

[१७] श्री महेन्द्र कुमार मानव, विन्ध्याचल प्रकाशन, छतरपुर (म० प्र०)

[१८] श्री सौभाग्यचंद्र तुरखिया, २ प्रभात सोसाइटी, सुरेन्द्र नगर।

वर्षों से हम

अपनी श्रेष्ठतम सेवायें

प्रस्तुत कर रहे हैं

नंबर

22

छाप बिड़ी

पीजीये.

निर्माता व्रजलाल मणीलाल एन्ड कं. गोंदिया.

SYNTROFIX PIGMENT EMULSION PASTES

FOR

UNSURPASSED BRILLIANCY OF YOUR PRINTS

Available in variety of Shades :

SYNTROFIX BRILLIANT LEMON—YELLOW
GOLDEN—YELLOW
ORANGE
GREEN
BLUE
RED
BROWN
BLACK

Manufacturers :

SYNDET PRIVATE LIMITED

OFFICE : Prajapati Building, Khadia Char Rasta, AHMEDABAD No. 1
Tele. : 23682

FACTORY : Dudheshwar Road, Opp. Rustom Mills, AHMEDABAD No. 1
Tele :25732

उत्तम तम्बाखू और कुशल कारीगरों से बनी

शेर और **पहलवान** छाप बिड़ी

भारत में अग्रणी है

मोहनलाल हरगोविंददास

जबलपुर म० प्र०

मानसेवी संपादक : अरविन्द कुमार । सह-संपादक : आलोक कुमार पाण्डे । व्यवस्थापक : श्री आर. आर. मिश्रा

स्वत्वाधिकारी प्रकाशक : अरविन्द कुमार, कमला नेहरू नगर, जबलपुर ।

मुद्रण : जबलपुर को-आपरेटिव प्रिंटिंग प्रेस, गोलबाजार, जबलपुर से मानसेवी संपादक अरविन्द कुमार के लिये मुद्रित

वर्ष : १ ।। अंक : २१ ।। १ मई १९७० ।। मूल्य : एक प्रति : ०.६० न० पै०

।। वार्षिक : १२ रु० ।।

आचार्य श्री के साहित्य की तीन नव्यतम कृतियां :

सत्य का सागर, शून्य की नाव	:	मूल्य ३/०० रु०
प्रभु की पगडंडियाँ	:	मूल्य ४/०० रु०
सत्य की पहली किरण	:	मूल्य ६/०० रु०

प्राप्ति स्थल : ॥ जीवन जागृति केन्द्र, रूम नं० ५३, एम्पायर बिल्डिंग,
डा० डी० एन० रोड, बंबई : १ ॥ फोन : २६४५३० ॥

॥ मेसर्स मोतीलाल बनारसीदास, ४१, यू० ए० बंगलो रोड,
जवाहरनगर, देहली–७ ॥ फोन २२७६५५ ॥

॥ सुषमा साहित्य मंदिर, जवाहरगंज, जबलपुर ।
फोन : ११३० ॥